₹ ~~30/-~~ 20/-

**ऑपरेशन सिंदूर**
साइबर संप्रभुता का नया शंखनाद

**बारूद के ढेर पर**
कूटनीतिक बिसात

# सत्य सदैव

www.satyasadev.com PRGI NO : DELHIN/2017/74560 वर्ष:9, अंक:05, मई - 2026 निर्भीक, निष्पक्ष एवं निष्ठा के साथ

## महाविवर्तन

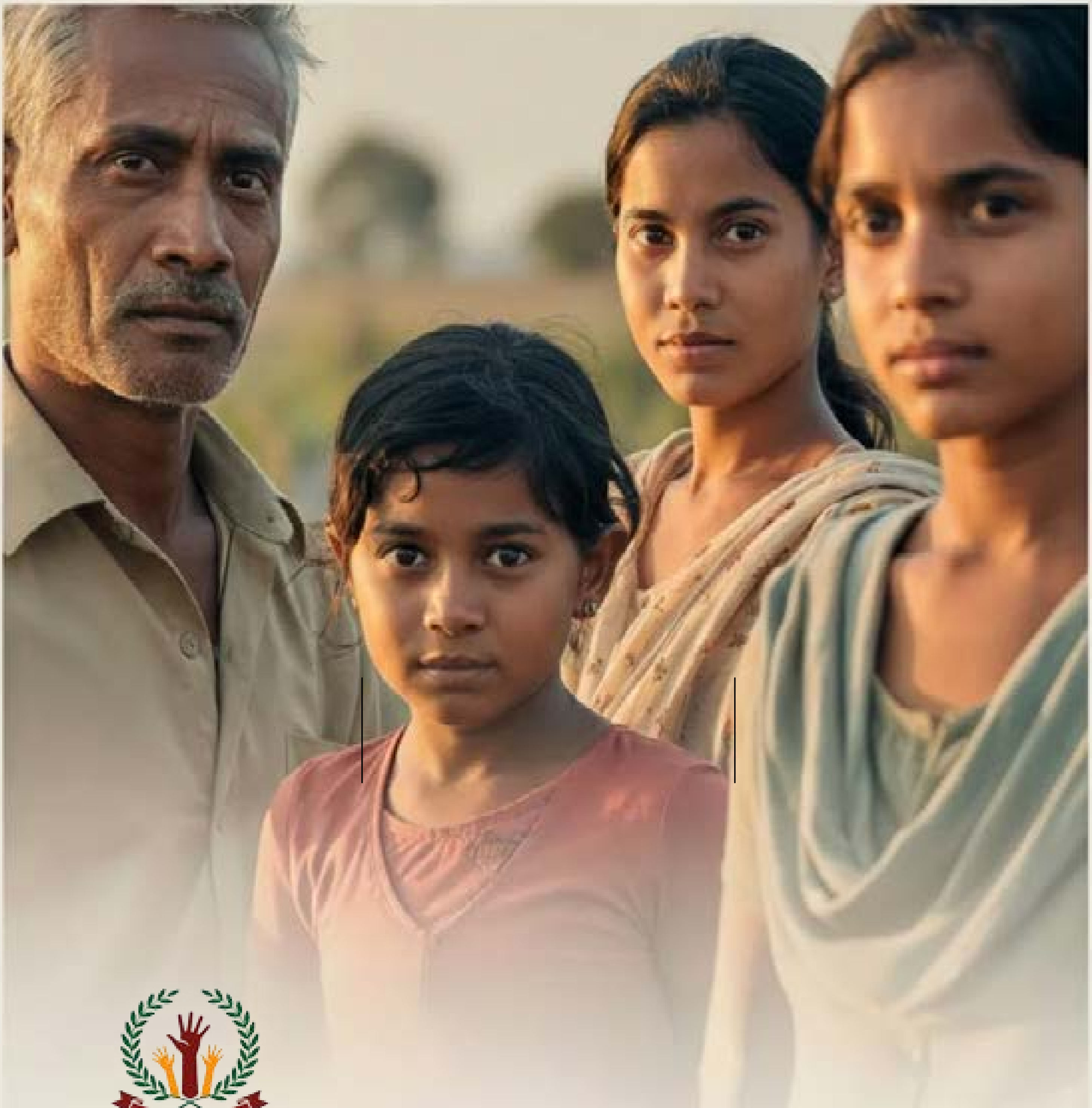

# KIRTI TRUST

Compassion • Empowerment • Sustainability

EMPOWERING Lives
BUILDING Futures

## CONTACT US


**Head Office**
M-131 ABL Work Space,
Connaught Place,
New Delhi-110001

**Regd. Office**
S-505, School Block,
Shakarpur, New
Delhi-110092

**Project Office**
Village & Post Office Kathura
District Sonipat (Haryana)
PIN- 131301

@kirtitrust
fb.com/kirtitrust
@kirti_trust

www.kirtitrust.org
info@kirtitrust.org

+91-9254-29-3293
+91-9050-29-3293

सत्य सदैव
निर्भीक, निष्पक्ष एवं निष्ठा के साथ

www.satyasadev.com PRGI NO : DELHIN/2017/74560
वर्ष:9, अंक:05, मई-2026

| | |
|---|---|
| संपादक | राकेश कुमार |
| मुख्य कार्यकारी संपादक | श्रीराजेश |
| उप संपादक | संतु दास, मनोज कुमार |
| सहायक उप संपादक | विशालश्योकंद,व्यास तिवारी |
| विधि संपादक | एडवोकेट राखी शर्मा |
| कला संपादक | अमर नंदी |
| मुख्य संवाददाता | प्रवेश शर्मा |
| जनसंपर्क अधिकारी | संगीता रानी |
| तकनीक व साइबर हेड | अनुज कुमार सिंह |
| प्रसार प्रबंधक | नीतिश भारद्वाज |
| चार्टर्ड अकाउंटेंट | शिव शंकर झा |

ब्यूरो

| | |
|---|---|
| दीप्तानु दास (अगरतला) | लक्की सिंह (भोपाल) |
| पंकज मौर्य (लखनऊ) | संजू जोशी (देहरादून) |
| आशीष कुमार (जयपुर) | अजय शर्मा ( श्री नगर) |
| अमित दास (गुवाहाटी) | नरेश आर्य (शिमला) |
| तेज सिंह (चंडीगढ़) | अजय कुमार( अहमदाबाद) |
| जितेन्द्र सिंह (रांची) | श्रीकांत (मुंबई) |

संपादकीय व कॉरपोरेट कार्यालय

एस 40, स्कूल ब्लॉक, शकरपुर,
नई दिल्ली-110092
ई-मेलः editor@satyasadev.com
वेबसाइटः www.satyasadev.com
दूरभाषः +91 9050 29 3293

उपरोक्त सभी पद अवैतनिक हैं। पत्रिका में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार पूर्णतः लेखकों के अपने हैं; सत्य-सदैव का उनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

स्वामी,प्रकाशक,मुद्रक एवं संपादक **राकेश कुमार** द्वारा मेसर्स आला प्रिंटिंग प्रेस, 3636, कटरा दिना बेग, लालकुआं दिल्ली-110006-से मुद्रित कराकर 19बी, जनता फ्लैट्स, पीरागढ़ी, नई दिल्ली 110041 से प्रकाशित

सुधि पाठकों एवं सम्मानित लेखकों से विनम्र आग्रह है कि वे अपनी प्रतिक्रियाएँ एवं प्रकाशनार्थ रचनाएँ ई-मेल द्वारा editor@satyasadev.com पर प्रेषित करें।

## संपादकीय

# संवेदनशील दरार

राकेश कुमार, संपादक

आ हिमालय केवल बर्फ, पर्वत और सीमाओं का भूगोल नहीं है,वह दक्षिण एशिया की सभ्यतागत स्मृति का भी केंद्र है। कैलाश मानसरोवर यात्रा इसी स्मृति का वह आध्यात्मिक मार्ग है, जिसने सदियों से भारत, नेपाल और तिब्बत के बीच सांस्कृतिक संपर्क को जीवित रखा है। किंतु विडंबना यह है कि आज वही मार्ग धीरे-धीरे भू-राजनीतिक अविश्वास और सीमाई दावों की राजनीति में उलझता दिखाई दे रहा है। नेपाल द्वारा लिपुलेख को लेकर भारत और चीन दोनों को कूटनीतिक आपत्ति दर्ज कराना केवल एक सीमाई विवाद नहीं, बल्कि बदलते क्षेत्रीय शक्ति-संतुलन का संकेत भी है।

भारत के लिए लिपुलेख कोई नया मार्ग नहीं है। कैलाश मानसरोवर यात्रा दशकों से इसी रास्ते से संचालित होती रही है। भारत का यह तर्क ऐतिहासिक निरंतरता और प्रशासनिक नियंत्रण पर आधारित है। दूसरी ओर, नेपाल इसे अपनी संप्रभुता का प्रश्न मानता है। समस्या यह है कि दक्षिण एशिया में सीमाएं केवल मानचित्रों से नहीं, बल्कि भावनाओं, राष्ट्रवाद और आंतरिक राजनीति से भी संचालित होती हैं। ऐसे में हर सीमाई प्रश्न शीघ्र ही राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक बन जाता है। लेकिन इस पूरे विवाद का एक गहरा भू-राजनीतिक आयाम भी है। पिछले कुछ वर्षों में चीन ने नेपाल में अपनी आर्थिक और रणनीतिक उपस्थिति लगातार बढ़ाई है। बुनियादी ढांचे, व्यापार और संपर्क परियोजनाओं के माध्यम से बीजिंग हिमालयी क्षेत्र में अपने प्रभाव को स्थायी रूप देने का प्रयास कर रहा है। ऐसी स्थिति में नेपाल का हर सीमाई प्रश्न अब केवल द्विपक्षीय मुद्दा नहीं रह जाता; वह भारत-चीन प्रतिस्पर्धा की छाया से भी प्रभावित होता है। यही कारण है कि लिपुलेख का विवाद केवल तीर्थमार्ग का विवाद नहीं, बल्कि हिमालयी भू-राजनीति का संवेदनशील बिंदु बन चुका है।

भारत के लिए चुनौती यह है कि वह इस विषय को केवल सुरक्षा या प्रशासनिक दृष्टि से न देखे। नेपाल के साथ संबंध सदैव विशेष रहे हैं—खुले सीमांत, सांस्कृतिक निकटता, धार्मिक संपर्क और जन-स्तर की आत्मीयता इन रिश्तों की आधारशिला रहे हैं। यदि संवाद के स्थान पर केवल कठोर कूटनीतिक प्रतिक्रिया दी जाती है, तो इससे नेपाल के भीतर भारत-विरोधी राजनीतिक ध्रुवीकरण और बढ़ सकता है, जिसका लाभ अंततः चीन को ही मिलेगा।

साथ ही, नेपाल को भी यह समझना होगा कि हर संवेदनशील मुद्दे को सार्वजनिक टकराव का रूप देना दीर्घकालिक समाधान नहीं है। हिमालयी क्षेत्र पहले ही रणनीतिक प्रतिस्पर्धा का केंद्र बन चुका है। ऐसे समय में संतुलित संवाद और आपसी विश्वास ही स्थिरता का आधार बन सकते हैं।

अंततः कैलाश मानसरोवर केवल एक तीर्थ नहीं है,वह एशियाई सभ्यता की साझा चेतना का प्रतीक है। यदि यह मार्ग भी भू-राजनीतिक अविश्वास का शिकार हो गया, तो नुकसान केवल कूटनीति का नहीं होगा—उस सांस्कृतिक सेतु का भी होगा, जिसने सदियों तक हिमालय को विभाजन नहीं, बल्कि संवाद का पर्वत बनाए रखा।

# समृद्धि का मरुस्थल

श्रीराजेश
मुख्य कार्यकारी संपादक

हमारे भव्य दीवानखानों की वातानुकूलित निस्तब्धता में एक निष्ठुर यथार्थ मौन सा बैठा है, जिसे स्वर देने का साहस प्रायः लुप्त हो चुका है—हम भारतीय, सामूहिक रूप से, एक अत्यंत उजड्ड और अशिष्ट समाज में रूपांतरित हो रहे हैं। यह वह अशिष्टता नहीं है, जो दरिद्रता की विवशता या अभाव की छटपटाहट से प्रस्फुटित होती है,अपितु यह उस नव-धनाढ्य वर्ग की 'भव्य विद्रूपता' है, जिसकी तिजोरियां तो आप्लावित हैं, किंतु जिसका अंतस आज भी रिक्त है। यह उस 'नवोदित कुलीनता' का अट्टहास है, जो कलाई पर 'रोलेक्स' तो बांधती है, किंतु कतारों के विखंडन में पौरुष का अनुभव करती है; जो करोड़ों के विलासितापूर्ण प्राचीरों में वास करती है, किंतु प्रत्येक भोर पड़ोसी के द्वार पर अतिक्रमण करना अपना नैसर्गिक अधिकार मानती है।

हमारे पास अब विपुल वैभव है, चमचमाते 'मॉल' हैं, विशिष्ट 'लाउंज' की विलासिता है और तीव्रगामी वाहनों के लिए विद्युत-ऊर्जा के केंद्र हैं। किंतु जो एक तत्व हमारे सामाजिक ताने-बाने से विस्मयकारी रूप से विलोपित हो चुका है, वह है—नागरिक बोध।

हमारे पास अब विपुल वैभव है, चमचमाते 'मॉल' हैं, विशिष्ट 'लाउंज' की विलासिता है और तीव्रगामी वाहनों के लिए विद्युत-ऊर्जा के केंद्र हैं। किंतु जो एक तत्व हमारे सामाजिक ताने-बाने से विस्मयकारी रूप से विलोपित हो चुका है, वह है—नागरिक बोध।

इस एंटाइटेलमेंट का प्रथम दृश्य पैंतीस हजार फीट की तुंगता पर दृष्टिगोचर होता है, जहां विमान के मेघों को चीरते ही भारतीय अहंकार अपने 'क्रूजिंग एल्टीट्यूड' को स्पर्श करता है। किसी भी घरेलू उड़ान की देहरी लांघना मात्र यात्रा नहीं, अपितु इस प्रश्न पर एक जटिल जनमत संग्रह बन जाता है कि 'अहम' की श्रेष्ठता किसकी अधिक व्यापक है। जैसे ही 'बोर्डिंग' की उद्घोषणा होती है, वहां एक ऐसीभगदड़ का दृश्यनिर्मित होता है, जो किसी प्रलयंकारी भगदड़ को भी लज्जित कर दे। वे परिवार, जिन्हें पूर्व-निर्धारित सीट आवंटित हैं, वे भी ऐसे व्यवहार करते हैं मानो 'टाइटैनिक' का अंतिम अवसान निकट हो और वे जीवन-नौका की अंतिम रश्मि प्राप्त करने हेतु युद्धरत हों।

धरातल पर अवतरित होते ही हम उपभोग के उन दीप्तिमान मॉलों में प्रवेश करते हैं, जो आकांक्षी भारत के नवीन तीर्थ बन चुके हैं। किंतु ये 'मॉल' अब हमारी सार्वजनिक शालीनता के पतन के मूक साक्ष्य हैं। परिवारों ने इन सार्वजनिक गलियारों को अपने निजी शयनकक्षों का विस्तार मान लिया है। एस्केलेटर की गति पर दायीं ओर चलने के उस वैश्विक शिष्टाचार से अनभिज्ञ जनसमूह, मार्ग को अवरुद्ध कर जड़वत खड़े रहते हैं। भद्र समाज के लिए धरा ही कचरा पात्र बन चुकी है और सेवा-कर्मियों को उंगलियों की ध्वनि पर निर्देशित करना उच्च-वर्ग की नई परिभाषा बन गई है। यह परिचय सुगमता लाने के स्थान पर केवल परस्पर अवमानना के विष का संचार कर रहा है।

किंतु विडंबना की पराकाष्ठा उन आवासीय दुर्गों में परिणत होती है, जिन्हें 'गेटेड कम्युनिटीज' के रूप में पूजा जाता है। भू-दृश्य उद्यानों और तरणतालों से सुसज्जित इन क्षेत्रों में प्रविष्ट होते ही पड़ोसियों के मध्य 'व्हाट्सएप' समूहों में वे छद्म युद्ध प्रारंभ हो जाते हैं, जो संयुक्त राष्ट्र के शांति मिशन को भी क्लांत कर दें। नियम अब केवल निर्बलों के लिए हैं और व्यक्तिगत द्वेष को किसी बहुमूल्य रत्न की भांति संजोया जा रहा है। हमने द्वार और सशस्त्र प्रहरी तो नियुक्त कर लिए, किंतु हम यह विस्मृत कर बैठे कि सभ्यता की रक्षा शस्त्रों के संचय से नहीं, अपितु व्यवहार की शुचिता से होती है।

विफलता का मूल कारण स्पष्ट है, हम 'सभ्य' होने की तुलना में कहीं अधिक तीव्र वेग से 'धनी' हो गए। आर्थिक गतिशीलता एक अद्भुत संवेग है, किंतु वह स्वतः गरिमा का प्रतिपादन नहीं करती। हमने कभी सार्वजनिक सौजन्य की संस्कृति का बीजारोपण ही नहीं किया, क्योंकि पीढ़ियों तक हमारे सार्वजनिक स्थान अराजकता के केंद्र थे। अब हमारे बाह्य परिवेश में तो व्यवस्था स्थापित हो गई है, किंतु वह आंतरिक अव्यवस्था अभी भी हमारी आत्मा के भीतर वास कर रही है।

हम एक वैश्विक महाशक्ति बनने की अभिलाषा रखते हैं, जो न्यायसंगत और प्रशंसनीय है। किंतु महाशक्तियां केवल उपग्रहों के प्रक्षेपण और एक्सप्रेसवे के जाल बिछाने से निर्मित नहीं होतीं। एक राष्ट्र का चरित्र उसके लघुतम और अलक्षित क्षणों में जीवित रहता है—एक अनुशासित कतार में, एक थामे हुए द्वार में, एक सहज 'क्षमा कीजिये' की मधुरता में। हम असाधारण उपलब्धियों के स्वामी हैं,अब समय आ गया है कि हम यह निर्धारित करें कि 'न्यूनतम शालीनता' भी उन्हीं महानतम पुरुषार्थों में से एक है। सभ्यता केवल संचय नहीं, अपितु वह सूक्ष्म विवेक है जो हमें यह बोध कराता है कि हमारी संपन्नता तभी सार्थक है जब वह सभ्यता के आलोक से प्रदीप्त हो।

धरातल पर अवतरित होते ही हम उपभोग के उन दीप्तिमान मॉलों में प्रवेश करते हैं, जो आकांक्षी भारत के नवीन तीर्थ बन चुके हैं। किंतु ये 'मॉल' अब हमारी सार्वजनिक शालीनता के पतन के मूक साक्ष्य हैं। परिवारों ने इन सार्वजनिक गलियारों को अपने निजी शयनकक्षों का विस्तार मान लिया है। एस्केलेटर की गति पर दायीं ओर चलने के उस वैश्विक शिष्टाचार से अनभिज्ञ जनसमूह, मार्ग को अवरुद्ध कर जड़वत खड़े रहते हैं।

# इस अंक में खास...

## 14 वैचारिक दुर्ग का पतन व पूर्वोदय का शंखनाद

| | |
|---|---|
| केरलम का लाल सूर्यास्त | 20 |
| पुदुच्चेरी: रंगास्वामी का राजयोग | 26 |
| वैधानिक विद्रूपता... | 32 |
| रोशनी का अंतिम यात्री | 34 |
| मेधा का महासंगम' | 36 |
| बिसात पर बालेन | 41 |

04

## बिसात पर दगाबाजी

इतिहास के रंगमंच पर जब महाशक्तियां टकराती हैं, तो नेपथ्य में रचे जा रहे षड्यंत्र अक्सर अग्रिम पंक्ति की मिसाइलों से अधिक घातक सिद्ध होते हैं। मई 2026 की इस तपती दोपहरी में, जब विश्व पश्चिम एशिया के खंडहरों से शांति की रश्मि खोजने का प्रयास कर रहा है....

08

## भूगर्भीय क्रांति

भारत के मानचित्र पर झारखंड की छवि लंबे समय तक एक ऐसे 'स्वर्ण-गर्भ' की रही है, जिसकी नियति केवल दोहन और उपेक्षा के द्वंद्व में फंसी रही। यह वह भूमि है जिसके अंतस से निकलने वाले 'ब्लैक डायमंड' अर्थात कोयले ने राष्ट्र के ताप विद्युत संयंत्रों को प्रदीप्त किया...

## द्रविड़ दुर्ग का नूतन थलपति

तमिलनाडु की उर्वर राजनैतिक भूमि ने समय-समय पर अनेक विस्मयकारी और नाटकीय विवर्तन देखे हैं, किंतु वर्ष 2026 का विधानसभा निर्वाचन उस ऐतिहासिक संधि-स्थल के रूप में अंकित किया जाएगा, जब सिनेमा के वृहत रजत-पटल से उतरकर एक नायक ने...

24

44

## रात, रिश्ता और रेड कार्पेट!

# बिसात पर दगाबाजी

## इस्लामाबाद का 'डबल गेम' और बीजिंग की सामरिक बिसात

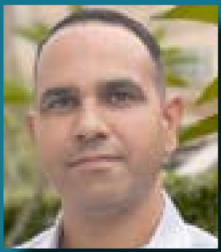

राकेश कुमार

*इतिहास के रंगमंच पर जब महाशक्तियां टकराती हैं, तो नेपथ्य में रचे जा रहे षड्यंत्र अक्सर अग्रिम पंक्ति की मिसाइलों से अधिक घातक सिद्ध होते हैं। मई 2026 की इस तपती दोपहरी में, जब विश्व पश्चिम एशिया के खंडहरों से शांति की रश्मि खोजने का प्रयास कर रहा है, दक्षिण एशिया की कूटनीतिक वायु में दगाबाजी की एक तीक्ष्ण गंध घुल चुकी है। इस्लामाबाद, जो स्वयं को वाशिंगटन और तेहरान के मध्य एक 'पवित्र सेतु' के रूप में प्रस्तुत कर रहा था, आज अपनी ही बुनी हुई बिसात पर बेनकाब खड़ा है। नूर खान एयरबेस पर पार्क किए गए ईरानी सैन्य विमानों की गूँज ने उस कूटनीतिक अधि-वृतांत को खंडित कर दिया है, जिसे पाकिस्तान ने 'निष्पक्ष मध्यस्थता' का नाम दिया था। यह केवल एक तकनीकी चूक नहीं, बल्कि एक 'सामरिक ढाल' का अनावरण है, जिसने वाशिंगटन के अविश्वास को एक प्रलयंकारी मोड़ पर ला खड़ा किया है।*

अमेरिकी खुफिया तंत्र की नवीनतम रिपोर्टों ने इस्लामाबाद के उस 'डबल गेम' की परतें उधेड़ दी हैं, जिसका इतिहास अफगानिस्तान के कालखंड से ही कलंकित रहा है। जब राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प तेहरान के साथ शांति की संविदा लिख रहे थे, ठीक उसी समय पाकिस्तान ने अत्यंत गोपनीयता के साथ ईरानी सैन्य संपत्तियों को अपने सामरिक ठिकानों पर शरण दी। सीबीएस की रिपोर्ट केअनुसार, अप्रैल के प्रारंभ में संधि-विराम की घोषणा के तत्काल पश्चात, तेहरान ने अपने टोही और खुफिया सूचना एकत्र करने वाले आरसी-130 विमानों सहित कई सैन्य साजो-सामान पाकिस्तान के नूर खान एयरबेस पर स्थानांतरित कर दिए।

इस्लामाबाद का यह कृत्य केवल लॉजिस्टिक सहयोग नहीं था; यह तेहरान की मारक क्षमता को अमेरिकी हवाई हमलों से बचाने के लिए निर्मित एक 'सुरक्षा कवच' था। पाकिस्तान के विदेश मंत्रालय ने यद्यपि इन आरोपों को 'श्रेणीबद्ध रूप से खारिज' करने का निष्फल प्रयास किया, किंतु उनके अपने ही वक्तव्य ने इस विद्रूप सत्य की पुष्टि कर दी कि ईरानी विमान पाकिस्तानी मिट्टी पर विद्यमान हैं। यह मध्यस्थ के मुखौटे के पीछे छिपे एक रणनीतिक साझीदार का चेहरा है, जिसने स्वयं को 'शिकारी और शिकार' दोनों के साथ खड़ा कर लिया है।

**वाशिंगटन का संशय और सीएनएन की चेतावनी**

वाशिंगटन के गलियारों में अब यह प्रश्न गूंज रहा है कि क्या इस्लामाबाद ने जानबूझकर राष्ट्रपति ट्रम्प के 'क्रोध' और उनकी कठोर शर्तों को तेहरान तक पहुँचने से रोका? सीएनएन की रिपोर्टों के अनुसार, ट्रम्प के निकटवर्ती सलाहकार इस बात से अत्यंत उद्वेलित हैं कि

पाकिस्तान ने तेहरान की स्थिति का एक 'न्यूनतम और कोमल' संस्करण वाशिंगटन के सम्मुख प्रस्तुत किया। यह कूटनीतिक अंतराल कोई विस्मृति नहीं, बल्कि एक सुनियोजित षड्यंत्र प्रतीत होता है, ताकि युद्ध को लंबा खींचकर अपनी प्रासंगिकता और सौदेबाजी की शक्ति को अक्षुण्ण रखा जा सके।

ईरानी राष्ट्रपति मसूद पेजेशकियन का हालिया वक्तव्य कि 'तेहरान के पास युद्ध और वार्ता दोनों के द्वार खुले हैं,' इसी पाकिस्तानी शह का प्रतिफल है। जब मध्यस्थ ही संदेशों को विद्रूप करने लगे, तो वार्ता की मेज कुरुक्षेत्र में परिवर्तित होना निश्चित है।

## नेतन्याहू का वज्रपातः 'बॉट' तकनीक और डिजिटल युद्ध

इजराइल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू ने एक टीवी साक्षात्कार में पाकिस्तान पर अविश्वास को ₹वैश्विक बुद्धिमत्ता की अनिवार्य शर्त₹ करार देकर इस अग्नि में घी का कार्य किया है। नेतन्याहू का आरोप अत्यंत गंभीर और आधुनिक हैः पाकिस्तान ने 'बॉट' तकनीक का उपयोग कर सोशल मीडिया पर एक ऐसा कृत्रिम विमर्श गढ़ा, जिसका ध्येय अमेरिका और इजराइल के सामरिक संबंधों में दरार उत्पन्न करना था। यह 'डिजिटल कुरुक्षेत्र' का वह रूप है, जहां एल्गोरिदम और कृत्रिम मेधा के माध्यम से मित्र राष्ट्रों के मध्य संदेह के बीज रोपे जा रहे हैं। पाकिस्तान की यह छद्म युद्धनीति अब उसे वाशिंगटन की 'हिट-लिस्ट' में शीर्ष पर ले आई है।

## दावों का विखंडनः क्या 'क्रश' हुआ ईरान?

राष्ट्रपति ट्रम्प ने 'ऑपरेशन एपिक फ्यूरी' के पश्चात दावा किया था कि उन्होंने ईरान की मिसाइल क्षमता को 'नष्ट' कर दिया है। किंतु न्यूयॉर्क टाइम्स द्वारा सार्वजनिक किए गए क्लासिफाइड आकलन एक भिन्न और डरावनी कहानी सुना रहे हैं। उपग्रह चित्रों और निगरानी डेटा (डेटा) के अनुसार, ईरान ने हॉर्मुज जलडमरूमध्य के समीप स्थित अपने 33 मिसाइल केंद्रों में से 30 को पुनः कार्यात्मक बना लिया है।

तेहरान ने न केवल अपने भूमिगत भंडारण केंद्रों तक पुनः पहुंच प्राप्त कर ली है, बल्कि उसके पास अभी भी पूर्व-युद्ध काल के 70 प्रतिशत मोबाइल मिसाइल लॉन्चर और बैलेस्टिक मिसाइलों का भंडार सुरक्षित है। यह अमेरिकी रक्षा सचिव पीट हेगसेथ के उन दावों पर एक करारा तमाचा है, जिनमें ईरान की सैन्य शक्ति को ₹कुचला हुआ₹ बताया गया था। यह विसंगति सिद्ध करती है कि तेहरान की सहनशक्ति और उसके पुनरुत्थान की क्षमता का वाशिंगटन ने अत्यंत सतही आकलन किया था।

# बीजिंग का सामरिक महासंगमः ट्रम्प-शी वार्ता के निहितार्थ

इसी अनिश्चितता और पराजय के बोध के मध्य, 13 से 15 मई 2026 तक होने वाली राष्ट्रपति ट्रम्प की चीन यात्रा आधुनिक इतिहास का सबसे निर्णायक राजनयिक मोड़ सिद्ध होने वाली है। शी जिनपिंग के निमंत्रण पर बीजिंग पहुँच रहे ट्रम्प के सम्मुख केवल व्यापारिक घाटा नहीं, बल्कि पश्चिम एशिया का वह धधकता हुआ ज्वालामुखी है जिसे शांत करने की कुंजी अब केवल ड्रैगन के पास है।

### 1. ईरान-हॉर्मुज संकट और चीनी प्रभाव

बीजिंग के तेहरान और खाड़ी देशों—दोनों के साथ अत्यंत प्रगाढ़ और संतुलित संबंध हैं। वह विश्व की इकलौती ऐसी शक्ति है जिसके पास ईरान के नेतृत्व को प्रभावित करने का लीवरेज है। ट्रम्प सीधे तौर पर शी जिनपिंग से उन चीनी फर्मों पर नकेल कसने की मांग करेंगे जो ईरानी हितों से जुड़ी हैं। यह 'बार्गेनिंग' का वह स्तर है जहां अमेरिका को अपनी तकनीकी श्रेष्ठता के बदले पश्चिम एशिया में शांति की भीख मांगनी पड़ सकती है।

### 2. एआई सुरक्षा और साइबर नियमन

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) और साइबर युद्ध के क्षेत्र में गलतफहमी को रोकने के लिए एक डी-कॉन्फ्लिक्शन चैनल का निर्माण इस शिखर सम्मेलन का मुख्य तकनीकी एजेंडा है। सीओल में ट्रेजरी सचिव स्कॉट बेसेंट और चीनी उप-प्रधानमंत्री हे लिफेंग की बैठक ने आर्थिक डिलिवरेबल्स की पृष्ठभूमि तैयार कर दी है, किंतु वास्तविक युद्ध नीति बीजिंग के बंद कमरों में ही तय होगी।

### 3. सीईओ कूटनीतिः एलन मस्क और टिम कुक का प्रभाव

व्हाइट हाउस ने इस यात्रा के लिए एलन मस्क और टिम कुक जैसे दिग्गजों को आमंत्रित कर यह स्पष्ट कर दिया है कि यह यात्रा 'ट्रांजैक्शनल कूटनीति' का चरमोत्कर्ष है। बोइंग विमानों और अमेरिकी सोयाबीन की खरीद बढ़ाकर चीन ट्रम्प को एक 'राजनैतिक विजय' का उपहार दे सकता है, किंतु इसके बदले वह तकनीकी निर्यात प्रतिबंधों में भारी ढील की आकांक्षा रखेगा।

### 4. ताइवान

यद्यपि वाशिंगटन ताइवान पर अपनी नीति को अपरिवर्तित बता रहा है, किंतु ट्रम्प द्वारा ताइपे को हथियारों की बिक्री को एजेंडे का हिस्सा बनाना एशिया के अन्य देशों, विशेषकर जापान को सशंकित कर रहा है। टोक्यो में प्रधानमंत्री सानाए ताकाहिची की बढ़ती सक्रियता यह दर्शाती है कि एशिया अब वाशिंगटन-बीजिंग के किसी गुप्त समझौते के प्रति अत्यंत सजग है।

### व्लादिमीर पुतिन का प्रवेश और वैश्विक पुनर्गठन

ट्रम्प के बीजिंग छोड़ते ही 18 मई को व्लादिमीर पुतिन का वहां पहुँचना इस सामरिक त्रिकोण को पूर्ण करता है। यह एक ऐसी नई विश्व व्यवस्था की पदचाप है, जहां वाशिंगटन अब 'एकमात्र अधिनायक' नहीं रहा। यदि चीन, रूस और ईरान की धुरी मज़बूत होती है, तो ट्रम्प की 'अमेरिका फर्स्ट' नीति एक ऐतिहासिक एकांतवास में बदल सकती है।

### राख के नीचे दबे भविष्य के प्रश्न

पाकिस्तान की गद्दारी ने जहाँ वाशिंगटन को दक्षिण एशिया में एक विश्वसनीय साझीदार से वंचित कर दिया है, वहीं बीजिंग यात्रा ट्रम्प के लिए अपनी गिरती हुई वैश्विक साख को बचाने का अंतिम अवसर है। इस्लामाबाद ने नूर खान एयरबेस पर जो विमान पार्क किए, वे केवल विमान नहीं थे—वे पाकिस्तान के उस 'डबल गेम' की अर्थी थे जिसे अब दुनिया देख चुकी है। आने वाले दिन यह तय करेंगे कि क्या बीजिंग की मेज पर सजी हुई शांति की इबारत यथार्थ बनेगी, या फिर तेहरान के वे 90 प्रतिशत सक्रिय मिसाइल स्थल विश्व को एक ऐसे महायुद्ध में झोंक देंगे जहां न कोई विजेता होगा और न ही कोई मध्यस्थ। कूटनीति का समय अब समाप्त हो रहा है; अब समय है उस कठोर यथार्थवाद का, जिसकी इबारत रक्त और विश्वासघात से लिखी जा रही है।

# संप्रभुता का शंखनाद

**हैदराबाद की जनसभा से उपजा प्रधानमंत्री का त्रिपक्षीय आह्वान मात्र सुझाव नहीं, अपितु वैश्विक आर्थिक विभीषिका के विरुद्ध 'आर्थिक राष्ट्रवाद' का रणघोष है। जब हॉर्मुज की लहरें बारूद से सुलग रही हों, तब प्रत्येक नागरिक का संयम ही राष्ट्र की वास्तविक ढाल बनता है।**

संतोष कुमार

मई की उस तपती दोपहर में जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी हैदराबाद के मंच पर खड़े हुए, तो उनके शब्दों में राजनैतिक कोलाहल के स्थान पर एक गंभीर सामरिक निस्तब्धता व्याप्त थी। उन्होंने देशवासियों से तीन विशेष आग्रह किए: वर्क फ्रॉम होम, स्वर्ण के क्रय में विलंब और अनावश्यक अंतरराष्ट्रीय यात्राओं से परहेज। सतही दृष्टि से देखने वालों ने इसे मात्र एक प्रतीकात्मक वक्तव्य माना, कुछ ने इसे अव्यावहारिक कहकर नकारा, किंतु जो लोग वैश्विक कूटनीति और आर्थिक भूगोल के अंतर्संबंधों को समझते हैं, उनके लिए यह 'रेड अलर्ट' की भांति था। यह आह्वान केवल एक परामर्श नहीं था, बल्कि भारत की आर्थिक संप्रभुता को अक्षुण्ण रखने के लिए 'जन-भागीदारी' का एक कूटनीतिक शंखनाद था।

## हॉर्मुज की जकड़न

इस प्रधानमंत्रीय आग्रह के नेपथ्य में पश्चिम एशिया का वह धधकता हुआ ज्वालामुखी है, जिसकी लपटें अब हॉर्मुज जलडमरूमध्य तक पहुँच चुकी हैं। ईरान और ओमान के मध्य का यह संकरा जलमार्ग विश्व की ऊर्जा आपूर्ति की वह

'महाधमनी' है, जिससे समूचे संसार का 20 प्रतिशत तेल प्रवाहित होता है। 28 फरवरी 2026 के उपरांत प्रारंभ हुए अमेरिका-ईरान संघर्ष ने इस जलमार्ग को एक सामरिक अवरोध में परिवर्तित कर दिया है।

इस व्यवधान के परिणामस्वरूप ब्रेंट कच्चे तेल की कीमतें 107 डॉलर प्रति बैरल को पार कर गई हैं, जो पिछले माह 126 डॉलर के उच्चतम स्तर पर थीं। ब्रेंट कच्चा तेल वैश्विक मूल्य निर्धारण का वह मापदंड है, जो गैसोलीन से लेकर प्लास्टिक तक प्रत्येक वस्तु की लागत को निर्धारित करता है। विश्व के अनेक संपन्न राष्ट्रों के लिए यह मूल्य वृद्धि केवल एक 'असुविधा' हो सकती है, किंतु भारत जैसे उभरते हुए वैश्विक अधिपति के लिए, यह एक मूलभूत आर्थिक भेद्यता का अनावरण है।

## आयात का बढ़ता बोझ और मुद्रा का अवसान

भारत अपनी कच्चे तेल की आवश्यकताओं का लगभग 88 प्रतिशत आयात करता है, जिसका 40 से 50 प्रतिशत भाग ऐतिहासिक रूप से हॉर्मुज जलडमरूमध्य से होकर गुजरता है। अर्थशास्त्र के निर्मम आंकड़े बताते हैं कि ब्रेंट की कीमतों में प्रति बैरल 10 डॉलर की प्रत्येक वृद्धि भारत के चालू खाता घाटे को जीडीपी के 0.3 से 0.5 प्रतिशत तक विस्तृत कर देती है।

चालू खाता घाटा केवल एक सांख्यिकीय शब्द नहीं है, बल्कि यह राष्ट्र की आर्थिक स्थिरता का ब्लड प्रेशर है। जब ब्रेंट की कीमतें मात्र कुछ मासों में 60 डॉलर से उछलकर 120 डॉलर के पार पहुँच जाती हैं, तो यह घाटा एक ऐसे प्रलयंकारी छिद्र में परिवर्तित हो जाता है, जो राष्ट्र के विदेशी मुद्रा भंडार को रिक्त करने की सामर्थ्य रखता है। प्रधानमंत्री का आह्वान इसी रिक्तता को भरने का एक राष्ट्रवादी उपक्रम है।

तीन आग्रह, तीन लक्ष्य

## 1. तेलः रक्त की भांति बहता डॉलर

तेल भारत की सबसे बड़ी चिंता है। कच्चे तेल और पेट्रोलियम उत्पादों का आयात भारत के कुल आयात बिल का लगभग 22 प्रतिशत है। नागरिकों को घर से कार्य करने, कारपूल अपनाने और सार्वजनिक परिवहन के उपयोग के लिए प्रोत्साहित करके, प्रधानमंत्री किसी महामारी के युग को पुनर्जीवित नहीं कर रहे हैं, बल्कि वे उस लक्ष्य को प्राप्त करने की चेष्टा कर रहे हैं जिसे मौद्रिक नीतियां त्वरित गति से प्राप्त नहीं कर सकतीं। घरेलू स्तर पर पेट्रोलियम की मांग में मात्र सूक्ष्म कमी भी रुपये की गिरती साख और व्यापार घाटे पर पड़ने वाले दबाव को न्यून कर सकती है। यह प्रत्येक नागरिक द्वारा राष्ट्र रक्षा की वेदी पर दी गई एक आहुति के समान है।

## 2. स्वर्णः पीली धातु का मोह बनाम राष्ट्र की स्थिरता

स्वर्ण भारत की दूसरी सबसे बड़ी आर्थिक दुर्बलता है। अप्रैल 2026 में भारत का स्वर्ण आयात 24 प्रतिशत की वृद्धि के साथ 71.98 अरब डॉलर के अभूतपूर्व स्तर पर पहुँच गया। भारत अपनी स्वर्ण आवश्यकता का 85 प्रतिशत आयात करता है, जो उसे विश्व के सर्वाधिक स्वर्ण-निर्भर राष्ट्रों में अग्रिम पंक्ति में खड़ा करता है।

आयातित स्वर्ण पर व्यय किया गया प्रत्येक रुपया वास्तव में घरेलू अर्थव्यवस्था से बाहर जाने वाला वह रक्त है, जो हमारे चालू खाते पर असहनीय दबाव डालता है। ऐसे समय में जब तेल का आयात पहले से ही हमारी आर्थिक स्नायु-प्रणाली को झकझोर रहा है, प्रधानमंत्री का यह आग्रह कि ₹स्वर्ण क्रय को एक वर्ष के लिए स्थगित कर दें,₹ अत्यंत विवेकपूर्ण और सामयिक है। यह स्वर्ण के परित्याग का आह्वान नहीं, बल्कि राष्ट्र की आर्थिक सेहत सुधरने तक एक 'रणनीतिक विराम' है।

## 3. पर्यटनः विदेशी मुद्राओं का निर्गमन

पर्यटन का तीसरा क्षेत्र वह है जहां भारतीय नागरिक डॉलर, यूरो और दिरहम के रूप में विदेशी मुद्रा व्यय करते हैं। अवकाश के लिए की जाने वाली अंतरराष्ट्रीय यात्राएं सामूहिक रूप से चालू खाता घाटे को और भी विषैला बनाती हैं। प्रधानमंत्री का यह आग्रह एक 'आर्थिक बफर' के रूप में कार्य करता है, जो नागरिकों को अपनी जीवनशैली के चयन पर पुनर्विचार करने और अपनी पूंजी को राष्ट्र की सीमाओं के भीतर रखने के लिए प्रेरित करता है।

## अविचल भारत

प्रधानमंत्री के इस संदेश को किसी 'भय' के रूप में नहीं, बल्कि 'सतर्कता' के रूप में देखा जाना चाहिए। भारत का विदेशी मुद्रा भंडार, जिसमें डॉलर, स्वर्ण और अन्य संपत्तियों का विशाल संचय है, रुपये की रक्षा के लिए एक सुदृढ़ कवच प्रदान करता है। भारतीय प्रवासियों द्वारा भेजा जाने वाला रेमिटेंस निरंतर इस कवच को सुदृढ़ कर रहा है। सरकार ने सक्रियता दिखाते हुए कच्चे तेल के स्रोतों का विविधीकरण भी किया है ताकि हॉर्मुज पर निर्भरता को न्यून किया जा सके। हमारे संस्थागत ढांचे पूर्णतः सशक्त और अडिग हैं।

यह आह्वान आगामी कठोर नीतिगत विमर्श का प्रारंभिक सोपान है। आने वाले समय में आयात शुल्क में वृद्धि, ईंधन की कीमतों का पुनर्संयोजन और घरेलू विकल्पों के लिए प्रोत्साहन जैसे और भी कड़े उपाय दृष्टिगोचर हो सकते हैं।

**तेल, स्वर्ण और वैश्विक पर्यटन के आयात बहीखाते पर बढ़ता दबाव भारत की रणनीतिक स्वायत्तता के सम्मुख एक गंभीर चुनौती है। प्रधानमंत्री का यह संदेश संकेत देता है कि आने वाले समय में कड़े नीतिगत विवर्तन अनिवार्य हैं, जहां राष्ट्र के अस्तित्व की रक्षा के लिए व्यक्तिगत विलासिता का त्याग ही एकमात्र मार्ग होगा।**

## व्यक्तिगत वित्त और राष्ट्रवादी विवेक

वर्तमान में घरेलू स्वर्ण की कीमतें 1.5 लाख रुपये प्रति 10 ग्राम के पार पहुँच चुकी हैं। एक विवेकशील नागरिक के लिए यह क्रय का तर्कसंगत समय नहीं है। प्रधानमंत्री का सुझाव यहाँ व्यक्तिगत वित्त और राष्ट्र के हित के मध्य एक सेतु का निर्माण करता है। 'सॉवरेन गोल्ड बॉन्ड' और स्वर्ण 'ईटीएफ' जैसे विकल्प भौतिक स्वर्ण के आयात के बिना ही मुद्रास्फीति के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करते हैं और अर्थव्यवस्था पर विदेशी मुद्रा का दबाव भी नहीं डालते।

शेयर बाजार के निवेशकों के लिए रुपये का 84 से 95 के स्तर तक गिरना एक स्पष्ट संकेत है। निर्यात से जुड़ी कंपनियां, जैसे सूचना प्रौद्योगिकी और औषधि उद्योग, कमजोर रुपये से लाभान्वित होते हैं। यह समय अपनी निवेश रणनीति को राष्ट्र की आर्थिक दिशा के साथ संरेखित करने का है।

## अंतर्विरोध और यथार्थ की चुनौतियां

यद्यपि प्रधानमंत्री का आह्वान राष्ट्रवादी चेतना से प्रदीप्त है, किंतु इसके सम्मुख कुछ व्यावहारिक चुनौतियां भी विद्यमान हैं। करोड़ों भारतीय परिवारों के लिए स्वर्ण मात्र विलासिता नहीं, बल्कि उनकी संचित पूंजी, बीमा और संकट का साथी है। स्वर्ण के परित्याग का आग्रह उन लोगों के लिए कठिन है जिनके पास मूल्य संचय का कोई अन्य सुरक्षित विकल्प नहीं है।

इसी प्रकार, घर से कार्य करने का विकल्प भारत के विशाल कार्यबल के उस बड़े हिस्से के लिए अप्राप्य है जो निर्माण, कृषि और मैनुअल सेवाओं में संलग्न है। प्रधानमंत्री का यह संदेश आय के भिन्न-भिन्न स्तरों पर भिन्न-भिन्न प्रभाव डालता है। एक अर्थशास्त्री की दृष्टि यहाँ यह प्रश्न अवश्य करेगी कि इस आर्थिक युद्ध की लागत का भार सर्वाधिक किस वर्ग पर पड़ेगा?

## राष्ट्र निर्माण का महायज्ञ

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का यह आह्वान कोई प्रशासनिक आदेश नहीं, बल्कि उस आर्थिक तंत्र को समझने का एक निमंत्रण है जिसमें हम निवास करते हैं। यह नागरिकों को उपभोक्ता से 'राष्ट्र-रक्षक' की भूमिका में रूपांतरित करने का एक साहसिक प्रयास है। आंकड़े और परिस्थितियां यह सिद्ध करती हैं कि यह समय संचय का नहीं, बल्कि संयम का है।

यदि 140 करोड़ देशवासी प्रधानमंत्री के इस 'आर्थिक सत्याग्रह' का हिस्सा बनते हैं, तो भारत न केवल इस वैश्विक संकट से निर्गत होगा, बल्कि एक अधिक स्वावलंबी और सशक्त महाशक्ति के रूप में उभरेगा। 2026 के इस डिजिटल कुरुक्षेत्र में, हमारी सबसे बड़ी विजय हमारे विवेक और राष्ट्रीय निष्ठा में ही निहित है।

सुमित कुमार

# भूगर्भीय क्रांति

आज, वर्ष 2026 के इस ऐतिहासिक संधि-काल में झारखंड एक बार फिर नियति के उस मोड़ पर खड़ा है, जहां से इतिहास की नई धारा प्रवाहित होने को आतुर है। इस बार विमर्श केवल निष्कर्षण का नहीं है, बल्कि यह एक अस्तित्वगत प्रश्न हैः क्या झारखंड स्वयं को ₹संसाधन-उपनिवेश₹ की विवशता से मुक्त कर एक ₹रणनीतिक शक्ति-राज्य₹ में रूपांतरित कर पाएगा? क्या यह राज्य केवल कच्चे माल का मूक प्रदाता बना रहेगा, या भविष्य की वैश्विक अर्थव्यवस्था में क्रिटिकल मिनरल्स, ग्रीन स्टीलऔर बैटरी सप्लाई चेन का केंद्रीय आधार स्तंभ बनेगा? यह वह महाविवर्तन है, जिसकी पदचाप झारखंड की पहाड़ियों, गहरी खदानों और रांची के सत्ता गलियारों में स्पष्ट सुनी जा सकती है।

## नया सामरिक भूगोल

इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक में वैश्विक कूटनीति का व्याकरण परिवर्तित हो चुका है। अब युद्ध केवल भौगोलिक सीमाओं के लिए नहीं, बल्कि उन संसाधनों के लिए लड़े जा रहे हैं जो भविष्य की तकनीक को संचालित करेंगे। तेल का युग अब ढलान पर है और 'क्रिटिकल मिनरल्स' अब नई सामरिक मुद्रा के रूप में उभरे हैं। लिथियम, ग्रेफाइट, कोबाल्ट और निकेल जैसी धातुएं आधुनिक तकनीकी सभ्यता की नई स्नायु-प्रणाली हैं। इलेक्ट्रिक व्हीकल, सेमीकंडक्टर, सौर ऊर्जा और अत्याधुनिक रक्षा उपकरण—ये सभी अब इसी भूगर्भीय संपदा के आश्रित हैं।

यही वह बिंदु है जहां चीन, अमेरिका और यूरोप के मध्य एक मौन किंतु भीषण मिनरल वॉर छिड़ा हुआ है। चीन ने वर्षों से इन दुर्लभ खनिजों के प्रोसेसिंग पर अपना एकाधिकार स्थापित कर रखा है। भारत के लिए यह एक भीषण रणनीतिक चुनौती है, क्योंकि औद्योगिक आत्मनिर्भरता अब केवल निर्माण क्षमता से नहीं, बल्कि खनिज संपदा पर नियंत्रण से सुनिश्चित होगी। इसी परिप्रेक्ष्य में झारखंड का महत्व अचानक हिमालयी ऊंचाई प्राप्त कर चुका है। यह राज्य अब केवल कोयले का भंडार नहीं, बल्कि भारत की 'ऊर्जा संप्रभुता' का नया कुरुक्षेत्र है। केंद्र सरकार की नवीन खनिज नीति और ग्रीन स्टील मिशनने झारखंड को राष्ट्रीय सुरक्षा के प्राथमिक पृष्ठ पर अंकित कर दिया है।

## कोयले की कालिख से हरित विवर्तन तक

झारखंड की राजनैतिक और आर्थिक पहचान सदैव धनबाद, झरिया और बोकारो की आग से परिभाषित होती रही है। एक समय था जब इस राज्य की नियति केवल 'ब्लैक डायमंड' के धुएं में ओझल थी। किंतु आज वही झारखंड ग्रीन इंडस्ट्रियल ट्रांजिशनकी एक वृहत प्रयोगशाला बन रहा है। जमशेदपुर में टाटा स्टील की प्रस्तावित ग्रीन स्टीलपरियोजना केवल एक औद्योगिक निवेश नहीं है; यह भारत के भविष्य की औद्योगिक प्रतिज्ञा है। समूचा विश्व अब कार्बन-आधारित अर्थव्यवस्था से विमुख होकर नेट-जीरोकी ओर अग्रसर है। यूरोप जैसे महाद्वीप कार्बन टैक्स के माध्यम से व्यापारिक अवरोध निर्मित कर रहे हैं। ऐसे में भारत के लिए अपने इस्पात उद्योग को 'लो-कार्बन' दिशा में मोड़ना अनिवार्य हो चुका है।

यदि झारखंड इस संक्रमण को सफलतापूर्वक पार कर लेता है, तो वह केवल एक खनिज उत्पादक राज्य नहीं रहेगा; वह भारत की 'हरित औद्योगिक क्रांति' का वैश्विक केंद्र बन जाएगा। यह रूपांतरण कोयले की राख से उठते हुए एक ऐसे भविष्य का निर्माण है, जहां तकनीक और पर्यावरण के मध्य एक नवीन सामंजस्य स्थापित होगा।

## अरण्य बनाम उत्खननः विकास की नैतिक अग्निपरीक्षा

किंतु झारखंड का आख्यान केवल मशीनों और निवेशों का शुष्क विवरण नहीं है। यह संघर्ष की एक मर्मभेदी गाथा भी है। झारखंड का भूगोल केवल खदानों की रेखाओं से नहीं बना है; यह आदिवासी स्मृतियों, पवित्र जंगलों, कलकल करती नदियों और एक विशिष्ट सांस्कृतिक अस्मिता का सघन जाल है। सारंडा के सघन अरण्य, सिंहभूम की लौह-पहाड़ियां और संथाल परगना की माटी केवल भौतिक संसाधन नहीं हैं, वे वहां के समुदायों की सभ्यतागत पहचान के प्राण-तत्व हैं।

यही कारण है कि यहां विकास सदैव एक विवादास्पद प्रश्न बना रहा है। एक ओर राष्ट्र की ऊर्जा पिपासा और औद्योगिक आकांक्षाएं हैं, तो दूसरी ओर स्थानीय समुदायों के अस्तित्व का संकट। एक ओर कंक्रीट के साम्राज्यों का विस्तार है, तो दूसरी ओर विस्थापन का वह भयावह दंश जिसने पीढ़ियों को बेघर कर दिया।

झारखंड का सर्वाधिक प्रखर प्रश्न यही है—क्या विकास का मापदंड केवल खदानों की गहराई होगी, या उसमें मनुष्य की गरिमा का भी कोई स्थान होगा? बीते दशकों में अनियोजित खनन ने हजारों परिवारों को मानचित्र से विलोपित कर दिया। जंगल सिमटते गए और जलस्रोत विषैले होते गए। इसी उपेक्षा की कोख से उग्रवाद की वैचारिक भूमि निर्मित हुई। माओवादी आंदोलन केवल बंदूक की भाषा नहीं था; वह उस संचित असंतोष का प्रस्फुटन था जहां एक समाज ने स्वयं को अपनी ही संपदा के मध्य अधिकारविहीन अनुभव किया।

## उग्रवाद के साये से सुशासन की ओर

एक दशक पूर्व तक सारंडा, चाईबासा और लातेहार जैसे क्षेत्र 'रैट-होल' (रैट-होल) माओवाद और रेड कॉरिडोरकी विभीषिका के पर्याय थे। अरण्यों में बंदूक की गूंज ही सत्ता का एकमात्र प्रतिवेदन थी। किंतु 2026 तक आते-आते यह चित्र परिवर्तित हो रहा है। सामरिक अभियानों, सड़कों के सघन जाल, डिजिटल कनेक्टिविटी और प्रशासनिक पहुंच के विस्तार ने उग्रवाद के दुर्गों को खंडित किया है। किंतु यह विजय अभी अधूरी है।

बंदूकें शांत हो सकती हैं, किंतु यदि बेरोजगारी, शिक्षा का संकट और विस्थापन के जख्मों का उपचार नहीं हुआ, तो यह असंतोष किसी नवीन और अधिक विकृत रूप में पुनः लौट सकता है। झारखंड को केवल 'नक्सल-मुक्त' करना पर्याप्त नहीं है, उसे 'अवसर-संपन्न' बनाना अनिवार्य है। नई पीढ़ी अब जंगलों के अंधकार में छिपना नहीं चाहती, वह डिजिटल अर्थव्यवस्था के प्रकाश का हिस्सा बनना चाहती है। यही वह आकांक्षी परिवर्तन है जो झारखंड के भविष्य की इबारत लिखेगा।

## झरिया की शाश्वत अग्निः एक प्रतीकात्मक चेतावनी

झारखंड का औद्योगिक हृदय धनबाद आज भी एक मौन चेतावनी की भांति खड़ा है। झरिया की भूमिगत अग्नि, जो एक शताब्दी से अधिक समय से सुलग रही है, केवल एक भूगर्भीय दुर्घटना नहीं है; वह भारत की अनियोजित और निर्दयी औद्योगिक विरासत का जीवंत रूपक है। धनबाद की श्रमिक बस्तियां, कोयला माफियाओं का वर्चस्व और प्रदूषण की वह धूसर चादर इस सत्य का प्रमाण हैं कि संसाधन सदैव समृद्धि नहीं लाते। यदि झारखंड को वास्तव में एक ₹नवीन मॉडल₹ बनना है, तो उसे धनबाद की त्रासदी से सीख लेनी होगी। केवल उत्खनन ही पर्याप्त नहीं है; वैल्यू एडिशन, पारिस्थितिक पुनर्संतुलन और मानवीय संवेदी शहरीकरण ही वह मार्ग है जो इस राज्य को उसकी गरिमा वापस दिला सकता है।

## भू-राजनीति का नवीन गुरुत्वाकर्षण केंद्र

झारखंड का सामरिक महत्व अब राष्ट्रीय सीमाओं का अतिक्रमण कर चुका है। वैश्विक सप्लाई चेनके पुनर्गठन के इस दौर में यह राज्य अंतरराष्ट्रीय महत्व का ध्रुव बन रहा है। अमेरिका और यूरोप अब चीन पर अपनी निर्भरता को न्यूनतम करना चाहते हैं और भारत स्वयं को एक ₹विश्वसनीय साझीदार₹ के रूप में प्रस्तुत कर रहा है। ऐसी स्थिति में झारखंड की खनिज संपदा भारत के लिए वही सामरिक भूमिका निभा सकती है, जो कभी मध्य-पूर्व के तेल ने वैश्विक राजनीति में निभाई थी। यह प्रथम अवसर है जब झारखंड का प्रश्न केवल ₹प्रादेशिक विकास₹ का नहीं, बल्कि ₹राष्ट्रीय सामरिक सुरक्षा₹ का प्रश्न बन गया है।

## धरा के अंतस में छिपा भविष्य

इतिहास साक्ष्य है कि प्राकृतिक संसाधन अनेक राष्ट्रों के लिए 'वरदान' के स्थान पर 'अभिशाप' सिद्ध हुए हैं। अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के कई देश रिसोर्स कर्सके शिकार होकर गृहयुद्धों में विलीन हो गए। झारखंड भी लंबे समय तक इसी नियति के पाश में बंधा रहा। किंतु आज उसके सम्मुख स्वयं को पुनः परिभाषित करने का एक स्वर्णिम अवसर है। यदि यह राज्य स्थानीय समुदायों को विकास का वास्तविक साझीदार बनाता है, शिक्षा और कौशल को अपनी ढाल बनाता है और खनिज संपदा को एक मूल्य-श्रृंखला में परिवर्तित करता है, तो वह भारत का सर्वाधिक महत्वपूर्ण रणनीतिक राज्य सिद्ध होगा।

झारखंड की पहाड़ियों के नीचे केवल कोयला या अयस्क नहीं दबा है; वहां आधुनिक भारत का भविष्य सुरक्षित है। यह राज्य आज उस मुहाने पर खड़ा है जहां उसे यह निर्णय करना है कि वह इतिहास की एक मृत खदान बना रहेगा या भविष्य की एक उज्ज्वल प्रयोगशाला।

खनिज केवल पत्थर नहीं होते, वे सभ्यताओं की दिशा निर्धारित करने वाले तत्व होते हैं। यदि यह महाविवर्तन सफल हुआ, तो आने वाले वर्षों में भारत की शक्ति की धुरी दिल्ली या मुंबई नहीं, बल्कि रांची, धनबाद और सिंहभूम की उर्वर माटी होगी। झारखंड अब केवल एक खनिज प्रदेश नहीं रहा; वह भारत के अभ्युदय का भूगर्भ बन चुका है।

# बारूद के ढेर पर कूटनीतिक बिसात

संदीप कुमार

**इतिहास के रंगमंच पर युद्ध और कूटनीति का अभिनय अक्सर परस्पर विरोधी प्रतीत होता है, किंतु वर्तमान अमेरिका-ईरान संघर्ष में यह एक विचित्र और नाटकीय विद्रूपता में रूपांतरित हो चुका है। यह एक ऐसा युद्ध है जो मात्र एक पृष्ठ के विधिक दस्तावेज पर वार्ता करने के लिए उतनी ही देर रुकता है, जितनी देर में नई मिसाइलें तैयार की जा सकें, और जैसे ही उन दस्तावेजों के 'फुटनोट' पर विवाद प्रारंभ होता है, तोपों की गर्जना पुन: वायुमंडल को चीरने लगती है। आज वाशिंगटन और तेहरान के मध्य की स्थिति उस 'सिनेमैटिक' विभीषिका के समान है, जहां शांति की इबारत अभी गीली ही होती है कि उसे रक्त की बूंदें स्याह कर देती हैं।**

द वॉल स्ट्रीट जर्नल' की नवीनतम रिपोर्टों ने वैश्विक राजनैतिक गलियारों में एक नई सनसनी पैदा कर दी है। सूत्रों के अनुसार, दोनों शत्रु राष्ट्र अगले सप्ताह के प्रारंभ में इस्लामाबाद की ऐतिहासिक धरा पर वार्ता की मेज साझा कर सकते हैं। मध्यस्थों के माध्यम से एक 14-सूत्रीय 'मेमोरेंडम ऑफ अंडरस्टैंडिंग' पर सूक्ष्मता से कार्य किया जा रहा है। यह दस्तावेज केवल एक समझौता नहीं है, बल्कि यह उस एक माह लंबी कूटनीतिक प्रक्रिया का खाका है, जिसका ध्येय इस प्रलयंकारी संघर्ष का औपचारिक अवसान करना है।

प्रस्तावित मसौदे के केंद्र में ईरान का विवादित परमाणु कार्यक्रम, हॉर्मुज जलडमरूमध्य में बढ़ते सामरिक तनाव को न्यून करना और तेहरान के अत्यधिक परिष्कृत यूरेनियम के भंडार को किसी तृतीय देश में स्थानांतरित करने की संभावना सम्मिलित है। यदि यह वार्ता आगे बढ़ती है, तो प्रारंभिक एक माह की अवधि को पारस्परिक सहमति से विस्तृत किया जा सकता है। किंतु, इस कूटनीतिक वसंत के मार्ग में 'प्रतिबंधों से राहत' का वह हिमालयी अवरोध खड़ा है, जो तेहरान के लिए अस्तित्व का प्रश्न है और वाशिंगटन के लिए सौदेबाजी का अंतिम मोहरा।

### हॉर्मुज का दहकता जल: संधि-विराम का विखंडन

राजनयिक युद्धाभ्यास यद्यपि जारी है, किंतु युद्धभूमि की वास्तविकता इस कूटनीतिक मृगतृष्णा को निरंतर खंडित कर रही है। शुक्रवार को फारस की खाड़ी में दोनों पक्षों के मध्य हुए भीषण गोलाबारी ने उन समस्त प्रयासों पर प्रश्नचिह्न अंकित कर दिया है, जिन्हें पिछले एक माह से शांति की आधारशिला माना जा रहा था। हॉर्मुज जलडमरूमध्य के भीतर और उसके समीप होने वाली यह मुठभेड़, संधि-विराम की घोषणा के पश्चात का सर्वाधिक भयावह 'फ्लेयर-अप' सिद्ध हुई है।

इस विभीषिका की आंच संयुक्त अरब अमीरात तक भी जा पहुँची है, जो शुक्रवार को पुनः सुनियोजित हमलों का लक्ष्य बना। यह सामरिक अराजकता स्पष्ट करती है कि वार्ता की मेज और युद्ध की अग्रिम पंक्तियों के मध्य का संवाद टूट चुका है। जब मिसाइलें जलमार्गों पर अट्टहास कर रही हों, तब 14 बिंदुओं के मसौदे की शुष्कता जनमानस को आश्वस्त करने में असमर्थ प्रतीत होती है।

### तेहरान की सहनशक्ति का कालचक्र

वाशिंगटन की दुविधाओं को उस 'इंटेलिजेंस' प्रतिवेदन ने और भी सघन बना दिया है, जिसका उल्लेख सर्वप्रथम द वाशिंगटन पोस्ट ने किया था। सीआईए के गहन विश्लेषण का निष्कर्ष यह है कि ईरान अपने बंदरगाहों की पूर्ण नौसैनिक घेराबंदी को अगले चार महीनों तक सहन करने की सामर्थ्य रखता है। यह आंकड़ा वाशिंगटन के उन रणनीतिकारों के लिए एक चेतावनी है जो आर्थिक दबाव के माध्यम से तेहरान को आत्मसमर्पण के लिए विवश करने का स्वप्न देख रहे थे।

अमेरिकी प्रशासन के लिए यह यथार्थ अत्यंत पीड़ादायक है कि तेहरान पर उनका प्रभाव उस क्षण अत्यंत सीमित है, जब अमेरिकी मतदाता इस युद्ध के प्रति निरंतर असहनशील हो रहे हैं। तेहरान की घड़ी वाशिंगटन

क ी घड़ी से भिन्न गति से चलती है; वहां का नेतृत्व समय को एक अस्त्र की भांति प्रयुक्त कर रहा है।

ट्रम्प का संशय और रूबियो की प्रतीक्षा

व्हाइट हाउस इस समय तेहरान के उस औपचारिक प्रत्युत्तर की प्रतीक्षा कर रहा है, जो युद्ध के विधिक समापन की दिशा में प्रथम सोपान होगा। शुक्रवार की संध्या, स्टर्लिंग, वर्जीनिया में अपने गोल्फ कोर्स की ओर प्रस्थान करने से पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने पत्रकारों के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा, ₹माना जा रहा है कि आज रात्रि हमें उनका उत्तर प्राप्त हो जाएगा।₹ जबउनसे यह पूछा गया कि क्या ईरान जानबूझकर इस प्रक्रिया में विलंब कर रहा है, तो ट्रम्प के स्वर में एक अनिश्चितता थी—₹हमें शीघ्र ही इसका आभास हो जाएगा।₹

उसी दिन रोम के प्रवास पर रहे विदेश मंत्री मार्को रूबियो ने भी एक 'सावधान प्रत्याशा' व्यक्त की। रूबियो के अनुसार, वाशिंगटन को आज किसी महत्वपूर्ण निर्णय का ज्ञान होना चाहिए। कूटनीति के ये शीर्ष पुरुष जिस 'लिम्बो' अर्थात त्रिशंकु की अवस्था में फँसे हैं, वह इस संघर्ष की नियति बन चुकी है: जब विश्व के सर्वाधिक महत्वपूर्ण तेल व्यापार मार्ग पर बंदूकें गरज रही हों, तब 'वार्ता के लिए वार्ता' के ढांचे का निर्माण किया जा रहा है।

सामरिक वर्टिको

तेहरान से आने वाला प्रत्युत्तर—चाहे वह आज प्राप्त हो, अगले सप्ताह या कभी नहीं—यह निर्धारित करेगा कि इस्लामाबाद एक ऐतिहासिक 'ब्रेकथ्रू' का साक्षी बनेगा या फिर यह राजनैतिक मानचित्र पर एक और त्रासद और अंधकारमय अध्याय का मात्र एक फुटनोटबनकर रह जाएगा।

इस युद्ध का दार्शनिक पक्ष यह है कि यहाँ 'जीत' की परिभाषा सैन्य विजय से हटकर 'धैर्य की परीक्षा' में परिवर्तित हो चुकी है। ईरान जानता है कि उसकी अर्थव्यवस्था के चार महीने वाशिंगटन के राजनैतिक धैर्य के चार महीनों से कहीं अधिक भारी पड़ सकते हैं। उधर अमेरिका, अपनी वैश्विक साख और आंतरिक चुनावी दबाव के मध्य एक ऐसा 'एग्जिट रूट' खोज रहा है जो सम्मानजनक भी हो और सामरिक रूप से लाभदायक भी।

भविष्य की अनिश्चित पदचाप

1200 शब्दों की यह राजनैतिक यात्रा हमें उस मुहाने पर छोड़ती है जहां भविष्य का मानचित्र धुंधला है। कूटनीति की भाषा और बारूद की गंध का यह समन्वय मानवता के लिए एक गंभीर चेतावनी है। यदि तेहरान की घड़ी और वाशिंगटन की महत्वाकांक्षाओं के मध्य सामंजस्य स्थापित नहीं हुआ, तो इस्लामाबाद की मेज पर सजी हुई फाइलें केवल राख के ढेर में परिवर्तित हो जाएंगी।

मई 2026 की यह धुंधली शाम यह प्रश्न पूछ रही है—क्या विवेक का सूर्योदय होगा, या सभ्यता एक और महाविनाश की ओर बढ़ेगी? उत्तर की प्रतीक्षा केवल वाशिंगटन को नहीं, बल्कि उस समूचे विश्व को है जिसकी धड़कनें हॉर्मुज के जलमार्गों और तेहरान के निर्णयों से बंधी हुई हैं।

# आशा भोंसले: सुरों का मायावी व अनन्त का अन्वेषण

**सत्य सदैव डेस्क**

1933 के उस ऐतिहासिक प्रहर में जब दीनानाथ और शेवंती मंगेशकर के आंगन में दूसरी कलिका प्रस्फुटित हुई, तो किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि यह नवजात शिशु संगीत के उस अखंड सूर्य के साये में अपनी एक स्वतंत्र और दैदीप्यमान आकाशगंगा निर्मित करेगा। आशा भोंसले का जीवन प्रारंभ से ही 'द्वितीय' होने के नियति-निर्धारित अभिशाप और अपनी अग्रजा लता मंगेशकर की विराट आभा के मध्य स्वयं को सिद्ध करने का एक दुरूह अनुष्ठान रहा है। यह उस स्वर-साधिका की गाथा है, जिसने पार्श्वगायन (प्लेबैक) के प्रतिमानों को तोड़ा, मरोड़ा और अंततः एक ऐसी नवीन भाषा प्रदान की, जो देह और आत्मा के मध्य के संगीत को स्वर देती है।

1940 के दशक की उस धुंधली पृष्ठभूमि में, जब पार्श्वगायन का तंत्र अभी शैशवावस्था में था, आशा ने बम्बई सिनेमा की देहरी पर दस्तक दी। प्रथम दशक उनके व्यक्तिगत और व्यावसायिक जीवन के भीषण कुरुक्षेत्र की भांति था। जब लता मंगेशकर का स्वर राष्ट्र की अंतरात्मा का आधिकारिक प्रतिवेदन बन चुका था, तब आशा के हिस्से केवल वे स्वर आए जो या तो बाल-सुलभ चंचलता के थे या समाज के हाशिये पर खड़े पात्रों के। 'नन्हे मुन्ने बच्चे', 'दे दी हमें आजादी' और 'चंदा मामा दूर के'—ये गीत मात्र रेडियो के काउंटडाउन शो की शोभा नहीं थे, बल्कि उस भीषण संघर्ष के मध्य आशा द्वारा स्थापित किए गए वे छोटे-छोटे 'विजेता स्मारक' थे, जिन्होंने उन्हें जनमानस से जोड़ा। 1966 में फिल्म 'दस लाख' के गीत 'गरीबों की सुनो' के लिए प्राप्त उनका प्रथम फिल्मफेयर (फिल्फेयर) पुरस्कार इसी सत्य की पुष्टि करता है कि उनकी कला ने शून्य से सृजन का मार्ग प्रशस्त किया था।

## क्लब और मुजरा संस्कृति का अभ्युदय

1950 के उत्तरार्ध तक आशा ने अपनी स्वर-साधना को एक ऐसा मोड़ दिया, जिसने भारतीय संगीत के व्याकरण को सदैव के लिए बदल दिया। राज कपूर की 'श्री 420' में नादिरा के पाशविक और पाश्चात्य विद्रूप चरित्र के लिए गाया गया 'मुड़ मुड़ के ना देख' केवल एक गीत नहीं, बल्कि एक विद्रोही स्वर का प्रादुर्भाव था। यहीं से उस शैली का बीजारोपण हुआ, जिसने आशा को उनके समय की अन्य समकालीन गायिकाओं से पृथक कर दिया। उन्होंने स्वरों के साथ लय और मौन के सूक्ष्म अंतरालों से खेलना प्रारंभ किया।

ओ. पी. नैय्यर के साथ उनकी साझीदारी ने भारतीय सिनेमा को वह 'मदहोश नायिका' दी, जिसका कंठ 'आइये मेहरबां' जैसी रहस्यमयी पुकार से लेकर 'कश्मीर की कली' की नैसर्गिक सुंदरता तक फैला हुआ था। वह युग लाइव रिकॉर्डिंग का था, जहां गायक वाद्यों के स्पंदन के साथ अपनी धड़कनों को समन्वित करते थे। आशा ने स्वयं को एफ्रो-अमेरिकन) ताल और जाज की थिरकन के साथ ऐसे अनुकूलित किया मानो उनका कंठ स्वयं एक वाद्ययंत्र बन गया हो।

## दार्शनिक गहराई और बर्मन दादा का सान्निध्य

1960 के दशक ने आशा के स्वर को दार्शनिक गरिमा प्रदान की। फिल्म 'वक्त' का साढ़े पांच मिनट लंबा गीत 'आगे भी जाने ना तू' साहिर लुधियानवी के शब्दों और रवी के संगीत में जीवन के अनिश्चित यथार्थ का वह सांगीतिक प्रतिवेदन था, जिसने संपूर्ण फिल्म के दर्शन को एक सूत्र में पिरो दिया। आशा का स्वर यहाँ आकांक्षा, भंगुरता और एक अज्ञात भविष्य के मध्य झूलती हुई मानवीय चेतना का विलाप बन गया।

जब नियति के खेल में लता और एस. डी. बर्मन के मध्य कूटनीतिक दूरी बढ़ी, तब आशा बर्मन दादा की प्राथमिक पसंद बनीं। यह वह स्वर्णकाल था जिसने 'बम्बई का बाबू', 'सुजाता' और 'काला पानी' जैसे चलचित्रों को वह अमर स्वर दिया, जो आज भी संगीत प्रेमियों की सामूहिक स्मृति का हिस्सा है। 'बंदिनी' में यद्यपि लता की वापसी हुई, किंतु आशा ने 'ओ पंछी प्यारे' और 'अब के बरस भेज' जैसे गीतों के माध्यम से अपनी अमिट छाप छोड़ी।

## संवाद और सिम्फनी: युगल गीतों का सम्मोहन

युगल गीतों (ड्यूएट्स) में आशा एक ऐसी कुशल नृत्यांगना की भांति थीं, जो सह-गायक के स्वर को केवल सुनती नहीं थी, बल्कि उसे प्रतिध्वनित और चुनौती भी देती थी। मोहम्मद रफी और किशोर कुमार के साथ उनकी साझीदारी ने 'उड़े जब जब जुल्फें' और 'छोड़ दो आंचल' जैसे गीतों के माध्यम से पर्दे पर अभिनय की गतिशीलता को द्विगुणित कर दिया। गीता दत्त के साथ 'जानू जानू रे' में उनकी हंसी की वह खनक आज भी श्रोताओं के अंतर्मन को गुदगुदाती है। नृत्य-प्रधान गीतों में उनकी स्वर-मोर्चाबंदी इतनी सटीक थी कि वह अभिनेताओं को सूक्ष्म शारीरिक चेष्टाओं—आंखों के संचालन और हाथों की मुद्रा—के लिए प्रेरित करती थी। 'झुमका गिरा रे' का वह रोमांच आज भी वैसा ही नवीन है, जैसा कि दशकों पूर्व था।

## कैबरे और पंचम: एक आधुनिक विवर्तन

1970 का दशक आशा के स्वर के 'विस्फोट' का युग था। आर. डी. बर्मन (पंचम) के साथ उनकी रचनात्मक जुगलबंदी ने भारतीय संगीत में एक आधुनिक और शहरी संवेदनशीलता का संचार किया। 'पिया तू अब तो आजा' और 'दम मारो दम' जैसे गीतों में आशा ने श्वास-प्रक्रिया (ब्रीदिंग) को एक संगीत उपकरण की भांति प्रयुक्त किया। कांपते हुए स्वर, सिसकियां और सूक्ष्म फुसफुसाहटें—इन तत्वों ने संगीत में वह एजी तत्व उत्पन्न किया, जिसने जीनत अमान जैसी तारिकाओं को 'आइकॉनिक' (आइकॉनिक) स्टारडम (स्टारडम) प्रदान किया। 'यादों की बारात' के कमरों से लेकर 'हम किसी से कम नहीं' की कव्वाली तक, आशा का स्वर एक ऐसा 'ऑरल इंट्रूजन' था, जिसने सिनेमाई ड्रामा को एक नई ऊंचाई दी।

## गरिमा और सूक्ष्मता का संगम

1980 के दशक ने आशा को पुनः एक नए स्वरूप में प्रस्तुत किया। रेखा के लिए 'उमराव जान' में गाई गई गजलें और गुलजार की 'इजाजत' के गीत यह प्रमाणित करते हैं कि आशा का कंठ केवल क्लबों की ऊष्मा के लिए नहीं, बल्कि विरह की शीतल अग्नि के लिए भी बना है। खय्याम के निर्देशन में उन्होंने अपने स्वर के पिच को न्यून कर उन सूक्ष्म तानों को पकड़ा, जो मुजफ्फर अली के उन ऐतिहासिक दृश्यों की मांग थी। 'इन आंखों की मस्ती' और 'खली हाथ आए हैं'—ये गीत आशा की उस परिपक्वता के साक्ष्य हैं, जो समय की धूल से और भी निखर गई थी।

# सत्य सदैव

से जुड़ें

# विचारों का सच्चा संगम

सत्य सदैव वह मंच है जहां विविध दृष्टिकोण, अनुभव और विचार एक साथ मिलते हैं। यह उन जिज्ञासु और जागरूक पाठकों का मंच है जो अपने समय के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रश्नों को गहराई से समझना चाहते हैं। हमारा प्रयास केवल समाचार देना नहीं, बल्कि विचारों का ऐसा संवाद स्थापित करना है जहां मतभेद के बावजूद सार्थक चर्चा हो सके। सत्य सदैव अपने पाठकों को एक ऐसा बौद्धिक मंच प्रदान करता है जहां खुली सोच, तर्कपूर्ण विमर्श और परस्पर सम्मान के साथ हम अपने समाज और दुनिया को समझने की दिशा में आगे बढ़ते हैं।

**सत्य सदैव को सब्सक्राइब करें**

और बनें उस समुदाय का हिस्सा जो सत्य, संवाद और विचार की शक्ति में विश्वास रखता है।

**केवल ₹20 प्रति अंक**

**अभी ऑर्डर करें:** satyasadev.com

| | | | |
|---|---|---|---|
| satyasadev.com का असीमित एक्सेस | विज्ञापन-मुक्त साइट ब्राउज़ करें | विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफार्म्स पर उपलब्ध | शीघ्र ही YouTube पर भी होगी हमारी मौजूदगी |

सब्सक्रिप्शन का वार्षिक ₹300। यह ऑफर केवल नए सब्सक्राइबर्स के लिए है।

# महाविवर्तन

## वैचारिक दुर्ग का पतन व पूर्वोदय का शंखनाद

भारतीय राजनीति के महासमर में कुछ निर्वाचन केवल सरकारों का विस्थापन नहीं करते, वे इतिहास की दिशा और सभ्यतागत विमर्श की धुरी को ही परिवर्तित कर देते हैं। 4 मई 2026 की वह तप्त दोपहरी, जब कोलकाता के ईडन गार्डन्स से लेकर सिलीगुड़ी के चाय बागानों तक मतपेटियों ने अपना मौन तोड़ा, तो वह केवल मतों की गणना नहीं थी; वह उस वैचारिक प्राचीर के ढहने की गूंज थी जिसे दशकों तक 'बंगाल की राजनैतिक विशिष्टता' का अभेद्य कवच कहा जाता रहा। पश्चिम बंगाल के इन विधानसभा चुनाव परिणामों ने उस 'अधि-वृतांत' को ही विखंडित कर दिया, जिसने इस राज्य को शेष भारत से राजनैतिक रूप से विलग कर रखा था। 294 सदस्यीय विधानसभा में भारतीय जनता पार्टी की 206सीटों पर अर्जित यह विजय केवल एक दल का उत्कर्ष नहीं, बल्कि भारत की वैचारिक धुरी का सुदूर पूर्व की ओर वह विस्तार है, जिसके कंपन अब दिल्ली के सत्ता-गलियारों से लेकर दक्षिण एशिया के सामरिक मानचित्रों तक अनुभव किए जा रहे हैं।

पश्चिम बंगाल का राजनैतिक मानस सदैव एक रहस्यमयी पहेली रहा है। यह वह भूमि है जहां राजनीति केवल सत्ता का संघर्ष नहीं, बल्कि संस्कृति का अनिवार्य विस्तार मानी जाती रही है। पुनर्जागरण के आलोक से लेकर, उग्र राष्ट्रवाद, वामपंथी जड़ता और तृणमूल के प्रतिरोध तक — बंगाल हमेशा विचारधाराओं की एक ऐसी प्रयोगशाला रहा जहां 'विचार' का मूल्य 'वोट' से अधिक था। यही कारण था कि लंबे समय तक भारतीय जनता पार्टी, जिसकी वैचारिक जड़ें उत्तर और पश्चिम भारत के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद में थीं, गंगा के इस डेल्टा में अपनी जड़ें जमाने के लिए संघर्षरत रही।

किंतु, 4 मईका जनादेश यह उद्घोष कर रहा है कि 'भद्रलोक राजनीति' का वह संकुचित युग अब इतिहास के संग्रहालय की वस्तु बन चुका है। वह युग जहां राजनीति पुस्तकालयों, विश्वविद्यालयीय बहसों और साहित्यिक विमर्शों की परिधि में सिमटी थी, उसे अब 'पहचान और शक्ति' की उस नग्न राजनीति ने विस्थापित कर दिया है, जिसे भाजपा ने अत्यंत सूक्ष्मता से गढ़ा। भाजपा ने बंगाल को केवल एक चुनावी राज्य की दृष्टि से नहीं देखा, बल्कि उसे एक 'वैचारिक रिक्तता' वाले प्रदेश के रूप में समझा। वामपंथ के पतन और कांग्रेस के पूर्णतः अप्रासंगिक हो जाने के बाद, वहां एक ऐसा राजनैतिक शून्य उत्पन्न हुआ था जिसे भरने का सामर्थ्य ममता बनर्जी की व्यक्तित्व-आधारित राजनीति में नहीं था।

### वैचारिक रिक्तता और प्रतीकों का शस्त्रीकरण

ममता बनर्जी की राजनीति मूलतः 'प्रतिरोध' की राजनीति थी। उन्होंने 34 वर्षों के वामपंथी शासन को जिस शौर्य से चुनौती दी, वह प्रशंसनीय था, किंतु सत्ता में आने के पश्चात वे एक स्थायी वैचारिक ढांचा निर्मित करने में विफल रहीं। उनका ₹दिल्ली बनाम बंगाल₹ का नैरेटिव प्रारंभ में तो प्रभावी रहा, किंतु समय के अंतराल में वह एक घिसा-पिटा अलंकार बनकर रह गया। भाजपा ने इसी छिद्र का लाभ उठाया। उसने राष्ट्रवाद को केवल एक नारा नहीं रहने दिया, बल्कि उसे बंगाल के स्थानीय सांस्कृतिक प्रतीकों के साथ समन्वित कर दिया।

दुर्गा पूजा की भव्यता, 'जय श्रीराम' का उद्घोष, मतुआ समुदाय की पीड़ा, सीमा सुरक्षा का संशय और अवैध घुसपैठ का दंश — ये केवल चुनावी मुद्दे नहीं थे, बल्कि बंगाल के सामाजिक मानस में गहरे पैठे हुए वे प्रश्न थे जिनका उत्तर पुरानी राजनीति देने में असमर्थ थी। भाजपा ने ₹सांस्कृतिक असुरक्षा₹ को एक बड़े चुनावी शस्त्र में परिवर्तित कर दिया। यह पहली बार हुआ कि बंगाल का मतदाता केवल 'वर्ग संघर्ष' की भाषा से विमुख होकर 'सभ्यतागत पहचान' के स्वर में अपना मत अंकित करने लगा।

### तृणमूल का पतनः जब क्रांति स्वयं को खाने लगी

इतिहास गवाह है कि जब कोई राजनैतिक दल अपनी जड़ों से कटकर केवल सत्ता के संरक्षण में जीने लगता है, तो उसका पतन अनिवार्य हो जाता है। ममता बनर्जी ने जिस 'कट मनी', 'सिंडिकेट राज' और 'प्रशासन के राजनैतिकरण' का विरोध किया था, कालांतर में उनकी अपनी पार्टी उन्हीं विसंगतियों का पर्याय बन गई। स्थानीय स्तर पर कार्यकर्ताओं की निरंकुशता और भ्रष्टाचार के कैंसर ने तृणमूल कांग्रेस की उस छवि को क्षत-विक्षत कर दिया, जो कभी 'मां, माटी,

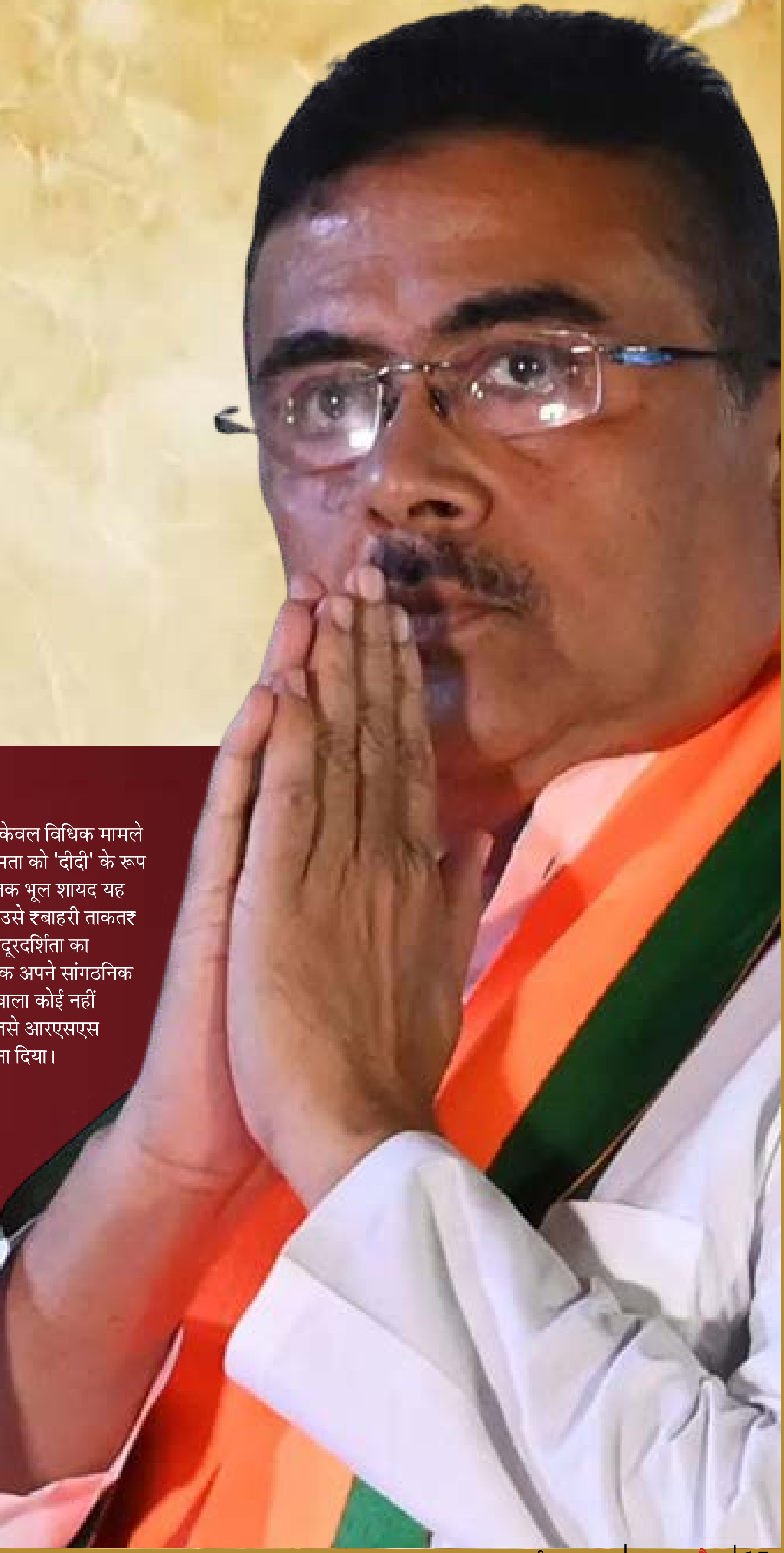

श्रीराजेश

मानुष' की सेवा के लिए समर्पित थी।

शिक्षक भर्ती घोटाला और शीर्ष नेतृत्व की गिरफ्तारियां केवल विधिक मामले नहीं थे, वे उस विश्वास के टूटने की ध्वनियां थीं, जिसने ममता को 'दीदी' के रूप में प्रतिष्ठित किया था। ममता बनर्जी की सबसे बड़ी रणनीतिक भूल शायद यह रही कि उन्होंने भाजपा के उभार को अत्यंत हल्के में लिया। उसे ₹बाहरी ताकत₹ या ₹बहिरागत₹ कहकर खारिज करना उनकी राजनैतिक अदूरदर्शिता का परिचायक था। भाजपा ने इस समय का उपयोग बूथ स्तर तक अपने सांगठनिक जाल को बिछाने में किया। जहां कभी भाजपा का नाम लेने वाला कोई नहीं था, आज वहां सुदृढ़ कैडरों की एक वाहिनी खड़ी हो गई, जिसे आरएसएस के नेटवर्क और डिजिटल प्रचार तंत्र ने एक अजेय शक्ति बना दिया।

## पूर्वी विस्तार: एक नई राष्ट्रीय तस्वीर

ये चुनाव परिणाम केवल पश्चिम बंगाल के सचिवालय ‘नवान्नों’के भाग्य का निर्णय नहीं करते। यह भाजपा के ₹पैन-इंडिया₹ पार्टी बनने की औपचारिक घोषणा है। हिंदी पट्टी की सीमाएं लांघकर जब भगवा ध्वज बंगाल की खाड़ी के तटों पर लहराया, तो इसने उस मिथक को सदैव के लिए दफन कर दिया कि कुछ राज्य वैचारिक रूप से किसी विशिष्ट पार्टी के लिए 'वर्जित' हैं।

उत्तर बंगाल, जंगलमहल और सीमावर्ती जिलों में भाजपा का निर्विवाद दबदबा यह संकेत दे रहा है कि भारत की राजनीति अब एक नए 'सामाजिक-सांस्कृतिक पुनर्संतुलन' के युग में प्रवेश कर चुकी है। कांग्रेस और वामदलों का लगभग शून्य पर सिमट जाना यह प्रमाणित करता है कि अब भारतीय राजनीति केवल दो ध्रुवों के बीच बंटी है — एक ध्रुव जो सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और केंद्रीकृत नेतृत्व का प्रतिनिधित्व करता है, और दूसरा ध्रुव जो क्षेत्रीय अस्मिता और संघीय लचीलेपन की बात करता है। किंतु वर्तमान आंकड़े स्पष्ट रूप से प्रथम ध्रुव की विजय की गाथा लिख रहे हैं।

यह जनादेश केवल एक चुनावी जीत नहीं, बल्कि एक मनोवैज्ञानिक विवर्तन है। बंगाल, जो भारत की चेतना का प्रतीक रहा है, आज स्वयं को एक नए रूप में परिभाषित कर रहा है। जब चेतना बदलती है, तो केवल सरकारें नहीं बदलतीं, अपितु इतिहास अपना नया मार्ग प्रशस्त करता है। पूर्व से उठती यह नई राजनैतिक ध्वनि अब समूचे राष्ट्र के लिए एक चेतावनी भी है और एक नवीन संभावना भी।

## मतुआ का संकल्प व सुवेंदु का राज्याभिषेक

ये चुनाव परिणाम केवल ईवीएम मशीनों से निकले आंकड़े नहीं हैं, बल्कि ये बंगाल के उस 'सामाजिक अनुबंध' के नवीनीकरण का प्रतिवेदन हैं, जिसे वामपंथ और तृणमूल ने दशकों तक अपनी जागीर समझा था। यदि भारतीय जनता पार्टी ने बंगाल के उस 'लाल गलियारे' और 'सिंडिकेट राज' के अवशेषों पर अपना केसरिया ध्वज प्रतिष्ठित किया है, तो इसके पीछे केवल मोदी की लोकप्रियता नहीं, बल्कि बंगाल के उस उपेक्षित मानस की सामूहिक पुकार है, जो 'अस्मिता' के नाम पर 'अभाव' को सहते-सहते थक चुका था। इस विवर्तन का सबसे सघन प्रभाव बंगाल के उन सीमावर्ती जिलों और जनजातीय अंचलों में देखा गया, जहां राष्ट्रीय सुरक्षा और व्यक्तिगत गरिमा अब चुनावी विमर्श की धुरी बन चुके हैं।

## 'डबल इंजन' का तिलिस्म

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने बंगाल के इस निर्वाचन को एक असाधारण नैरेटिव प्रदान किया—'राष्ट्रीय विकास मॉडल बनाम क्षेत्रीय अवरोध'। भाजपा ने निरंतर यह संदेश प्रसारित किया कि बंगाल की उन्नति तभी संभव है जब कोलकाता की सत्ता दिल्ली की शक्ति के साथ कदमताल करे। यह 'डबल इंजन' की थ्योरी हिंदी पट्टी में तो सफल रही थी, किंतु बंगाल में इसकी सफलता को लेकर संदेह व्याप्त था। कारण था—बंगाल का वह प्रखर क्षेत्रीय गौरव, जो स्वयं को सदैव भारत की राजनैतिक मुख्यधारा से पृथक और श्रेष्ठ मानता रहा।

किंतु, इन चुनाव परिणामों ने सिद्ध कर दिया कि बंगाल का युवा मतदाता अब 'स्थानीय गर्व' की जंजीरों को तोड़कर 'राष्ट्रीय शक्ति' का सहभागी बनना चाहता है। यह एक मनोवैज्ञानिक विस्थापन है। बंगाल, जो लंबे समय तक केंद्र की प्रत्येक योजना को 'विदेशी आक्रमण' की भांति देखता था, आज वही बंगाल उज्ज्वला, आयुष्मान और पीएम-आवास के माध्यम से दिल्ली को अपने घर की देहरी पर खड़ा पा रहा है। 'विकास' अब केवल फाइलों का आंकड़ा नहीं, बल्कि एक 'अनुभव' बन चुका है। इसी अनुभव ने उस 'दीदी' के प्रभाव को निर्बल कर दिया, जिन्होंने स्वयं को बंगाल की एकमात्र रक्षक के रूप में प्रस्तुत किया था।

### मतुआ व नामशूद्र

बंगाल के इस राजनैतिक महाभूकंप का केंद्र 'मतुआ समुदाय' और 'नामशूद्र' समाज रहा है। भाजपा ने नागरिकता संशोधन कानून (सीएए) को केवल एक विधिक दस्तावेज नहीं रहने दिया, बल्कि उसे हिंदू शरणार्थियों के सम्मान और अस्तित्व के महामंत्र में परिवर्तित कर दिया। उत्तर 24 परगना, नादिया और सीमावर्ती जिलों में मतुआ समुदाय का भाजपा के पक्ष में एकतरफा ध्रुवीकरण यह दर्शाता है कि 'नागरिकता' का प्रश्न इन लोगों के लिए रोटी से भी बड़ा हो चुका था।

दशकों तक इन शरणार्थियों को केवल 'वोट बैंक' की भांति उपयोग किया गया, किंतु उन्हें वह विधिक संप्रभुता नहीं दी गई जिसके वे हकदार थे। भाजपा ने उनके भीतर यह विश्वास जगाया कि 'दिल्ली' उनकी पहचान की संरक्षक है। सीएए के कार्यान्वयन की प्रतिबद्धता ने उस वैचारिक दीवार को ढहा दिया, जिसे तृणमूल ने "धर्मनिरपेक्षता" के नाम पर खड़ा किया था। जब मतुआ समुदाय के किसी वृद्ध ने पहली बार स्वयं को भारत का विधिक नागरिक महसूस किया, तो उसने मतपेटी में तृणमूल की उस 'वोट बैंक राजनीति' को सदैव के लिए दफन कर दिया। यह "सांस्कृतिक असुरक्षा" का वह प्रतिकार था, जिसे वामपंथी बुद्धिजीवी कभी समझ ही नहीं पाए।

## सुवेंदु अधिकारी: 'पोस्ट-टीएमसी' शॉक

9 मई 2026 को जब सुवेंदु अधिकारी मुख्यमंत्री पद की शपथ लिये, तो वे केवल एक सरकार के प्रमुख नहीं बने, बल्कि वे उस 'संक्रमण काल' के सेनापति बन गए, जिसे इतिहास 'पोस्ट-टीएमसी ट्रांजिशन शॉक' के रूप में याद रखेगा। सुवेंदु की राजनीति आक्रामक राष्ट्रवाद और सूक्ष्म सांगठनिक कौशल का एक अद्भुत मिश्रण है। नंदीग्राम की उस संकरी गलियों से निकलकर राज्य की सत्ता के सर्वोच्च शिखर तक पहुंचने की उनकी यात्रा में उन सभी तत्वों का समावेश है, जो एक जननायक के लिए आवश्यक हैं।

किंतु, उनके सम्मुख चुनौतियां हिमालय जैसी विशाल हैं। बंगाल में सत्ता परिवर्तन के साथ ही बारूद की गंध का फैलना यह संकेत दे रहा है कि पुरानी व्यवस्था इतनी सरलता से समर्पण नहीं करेगी। चुनाव के दौरान यद्यपि शांति रही, किंतु परिणामों के उपरांत भड़की हिंसा और सुवेंदु केनिजी सहायक चंद्रनाथ रथ की हत्या यह सिद्ध करती है कि बंगाल की राजनैतिक संस्कृति में 'प्रतिशोध' का रक्त अभी भी प्रवाहित हो रहा है। चंद्रनाथ रथ पूर्व भारतीय वायुसेना अधिकारी थे और बाद में भाजपा नेता सुवेंदु अधिकारी के बेहद करीबी सहयोगी एवं रणनीतिक सहायक के रूप में कार्य कर रहे थे।रिपोर्ट्स के अनुसार, उनकी गोली मारकर हत्या पश्चिम बंगाल में चुनाव परिणाम आने के तुरंत बाद हुई राजनीतिक हिंसा के बीच की गई। जांच एजेंसियों को इस हत्या के पीछे सुनियोजित साजिश और पेशेवर शूटरों की भूमिका की आशंका है। ऐसी स्थिति में सुवेंदु के लिए प्रथम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य होगा—'कानून का इकबाल' पुनः स्थापित करना। उन्हें यह सिद्ध करना होगा कि भाजपा की सरकार 'बदला' नहीं, बल्कि 'बदलाव' के लिए आई है। यदि नई सरकार भी उसी प्रतिशोध की राजनीति पर चलती है, तो 'सोनार बांग्ला' का स्वप्न पुनः धुंधला सकता है।

## प्रशासनिक पंगुता और नौकरशाही का पुनर्गठन

ममता बनर्जी के कार्यकाल में बंगाल के प्रशासन का जिस प्रकार 'राजनैतिकरण' हुआ, वह किसी भी लोकतंत्र के लिए चिंताजनक था। थाने से लेकर सचिवालय तक, नौकरशाही तृणमूल के कैडरों (कैडरों) की भांति कार्य कर रही थी। निर्वाचन आयोग द्वारा चुनाव से पूर्व मुख्य सचिव, गृह सचिव और पुलिस महानिदेशक सहित 50 से अधिक अधिकारियों का स्थानांतरण इसी सड़न को साफ करने का एक प्रयास था।

अब सुवेंदु अधिकारी के सम्मुख सबसे बड़ी चुनौती इस 'राजनैतिक नौकरशाही' का शुद्धिकरण करना है। उन्हें एक ऐसा प्रशासनिक तंत्र निर्मित करना होगा जो किसी दल विशेष के प्रति नहीं, बल्कि संविधान के प्रति उत्तरदायी हो। बंगाल की औद्योगिक जड़ता को तोड़ने के लिए प्रशासनिक निष्पक्षता अनिवार्य है। यदि निवेशक को यह आभास हो गया कि 'सिंडिकेट राज' का स्थान अब 'नए सिंडिकेट' ने ले लिया है, तो भाजपा का आर्थिक मॉडल धराशायी हो जाएगा। सुवेंदु को 'डच डिजीज' (अर्थात एक ही संसाधन पर निर्भरता) के स्थान पर बंगाल को बहुआयामी निवेश का केंद्र बनाना होगा।

## मुस्लिम वोट बैंक का विखंडन और नवीन यथार्थ

बंगाल की लगभग 30 प्रतिशत मुस्लिम आबादी हमेशा से सत्ता की कुंजी रही है। दशकों तक यह वर्ग एक

'ब्लॉक वोट' की भांति तृणमूल के पीछे खड़ा रहा। किंतु इन चुनावों में इस 'अजेय दुर्ग' में भी दरारें दृष्टिगोचर हुईं। भाजपा ने यद्यपि मुस्लिम मतों की आकांक्षा नहीं की, किंतु उसने हिंदू मतों के उस 'महा-ध्रुवीकरण' को अंजाम दिया जिसने मुस्लिम वोट बैंक की सौदेबाजी की शक्ति को शून्य कर दिया।

दूसरी ओर, मुस्लिम समाज के भीतर भी एक आंतरिक मंथन प्रारंभ हो चुका है। शहरी और आधुनिक मुस्लिम युवाओं का एक वर्ग अब स्वयं को 'मजहबी पहचान' से इतर 'आर्थिक पहचान' से जोड़कर देख रहा है। वे देख रहे हैं कि 'तुष्टिकरण' ने उन्हें केवल मदरसा शिक्षा और पिछड़ेपन के गर्त में धकेला है, जबकि राष्ट्रीय विकास की लहर उन्हें स्पर्श तक नहीं कर पाई। यद्यपि यह वर्ग अभी भी भाजपा के प्रति सशंकित है, किंतु तृणमूल के प्रति उनका अंध-समर्थन अब समाप्त हो चुका है। यदि भाजपा की नई सरकार ₹सबका साथ, सबकाविकास₹ के सिद्धांत पर अडिग रहती है और वक्फ संपत्तियों की जांच एवं मदरसों के आधुनिकीकरण को पारदर्शी बनाती है, तो बंगाल का सामाजिक ताना-बाना एक नए और अधिक संतुलित स्वरूप में उभर सकता है।

## वामपंथ की अंत्येष्टि

वह बंगाल, जो कभी 'रेड कॉरिडोर' की राजधानी था, आज वहां लाल झंडे की खोज करना भी कठिन है। वामदलों का लगभग शून्य पर सिमट जाना केवल एक चुनावी हार नहीं है, बल्कि यह उस वैचारिक मॉडल की अंतिम अंत्येष्टि है जिसने दशकों तक वर्ग संघर्ष के नाम पर बंगाल की प्रगति को अवरुद्ध किया। नई पीढ़ी अब मार्क्स और लेनिन के उस 'क्लास स्ट्रगल' से जुड़ाव महसूस नहीं करती। उनके लिए रोजगार, डिजिटल राष्ट्रवाद और सांस्कृतिक गौरव अधिक महत्वपूर्ण हैं।

विडंबना यह है कि जिस बंगाल ने वामपंथ को भारतीय राजनीति की मुख्यधारा में स्थापित किया था, आज उसी बंगाल ने वामपंथ को एक 'ऐतिहासिक दुर्घटना' मानकर विस्मृत कर दिया है। वामपंथियों की यह विफलता कांग्रेस के लिए भी एक चेतावनी है, जो अब बंगाल में केवल एक 'सांस्कृतिक अवशेष' बनकर रह गई है।

यह संक्रमण काल बंगाल के लिए 'अग्नि-परीक्षा' का समय है। सुवेंदु अधिकारी के नेतृत्व में भाजपा को एक ऐसी 'लक्ष्मण-रेखा' खींचनी होगी जो विकास और न्याय के मध्य संतुलन बनाए रखे। बंगाल का मानस बदल चुका है, वह अब 'क्रांति' नहीं, 'परिणाम' चाहता है। यदि कमल की यह पंखुड़ियां सुशासन की खुशबू बिखेरने में सफल रहीं, तो 2029 के लोकसभा चुनाव में भाजपा के लिए पूर्वी भारत का यह सामरिक द्वार एक अजेय किला बन जाएगा। अन्यथा, इतिहास साक्षी है कि बंगाल की माटी जितनी उर्वर है, उतनी ही निर्मम भी।

## बंगाल से बदलता दक्षिण एशिया

बंगाल के रणांगण में जो घटित हुआ, उसकी गूँज केवल हावड़ा ब्रिज के विस्तार या दार्जिलिंग की पहाड़ियों तक सीमित नहीं है। यह भारतीय संप्रभुता के उस 'पूर्वी द्वार' का उद्घाटन है, जिसने न केवल भारत के आंतरिक राजनैतिक मानचित्र को पुनर्गठित किया है, बल्कि ढाका से इस्लामाबाद और बीजिंग तक एक सामरिक स्पंदन पैदा कर दिया है। पश्चिम बंगाल केवल एक राज्य नहीं है; यह भारत की वह 'भू-राजनीतिक नस' है, जिस पर पड़ने वाला कोई भी दबाव समूचे दक्षिण एशिया के रक्तचाप को परिवर्तित करने की सामर्थ्य रखता है। भाजपा की यह अभूतपूर्व सफलता भारतीय गणतंत्र के एक ऐसे नवीन स्वरूप का संकेत है, जहां'राष्ट्रीय सुरक्षा' और 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' अब प्रादेशिक सीमाओं को लांघकर अंतरराष्ट्रीय विमर्श का केंद्र बन रहे हैं।

## ढाका की बेचैनी

भारत-बांग्लादेश की लगभग 4,096 किलोमीटर लंबी सीमा का एक वृहत भाग पश्चिम बंगाल से होकर गुजरता है। दशकों तक यह सीमा अवैध आव्रजन, तस्करी, नकली मुद्रा के संजाल और कट्टरपंथी गतिविधियों की एक उर्वर भूमि बनी रही। भाजपा ने निरंतर यह आरोप लगाया कि बंगाल की पिछली सरकारों ने 'वोट बैंक' की क्षुधा शांत करने के लिए सीमा प्रबंधन को शिथिल रखा। किंतु, 2026 की इस निर्णायक जीत ने उस 'वोट बैंक सुरक्षा कवच' को छिन्न-भिन्न कर दिया है।

ढाका के सत्ता-गलियारों में व्याप्त बेचैनी का कारण स्पष्ट है। बंगाल में भाजपा की सुदृढ़ सरकार बनने का अर्थ है—पूर्वी सीमा नीति का अधिक आक्रामक और तकनीकी रूप से प्रखर होना। नागरिकता संशोधन कानून (सीएए) और राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (एनआरसी) का प्रभावी कार्यान्वयन अब केवल विधिक संभावना नहीं, बल्कि एक प्रशासनिक यथार्थ बनने जा रहा है। मतुआ समुदाय के माध्यम से भाजपा ने जो 'शरणार्थी राजनीति' की बिसात बिछाई है, वह अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बांग्लादेश के भीतर धार्मिक उत्पीड़न के मुद्दों को पुनः प्रज्वलित कर सकती है। यदि नई दिल्ली अब अपनी पूर्वी सीमा पर 'जीरो टॉलरेंस' की नीति अपनाती है, तो इसका सीधा प्रभाव द्विपक्षीय व्यापार और क्षेत्रीय कूटनीति पर पड़ेगा। बंगाल अब केवल एक 'सांस्कृतिक सेतु' नहीं, बल्कि भारत की 'राष्ट्रीय सुरक्षा' का एक अभेद्य प्रहरी बनने की ओर अग्रसर है।

## पाकिस्तान का 'द्वि-मोर्चीय' संशय एवं कूटनीतिक पंगुता

इस्लामाबाद की रणनीतिक सोच में भारत के भीतर का 'क्षेत्रीय असंतुलन' सदैव एक निवेश की भांति रहा है। पाकिस्तान को यह सदैव आशा रही कि भारत के सुदृढ़ क्षेत्रीय दल केंद्र की शक्ति को संघीय तनावों में उलझाए रखेंगे, जिससे भारत की रक्षा नीति बंटी हुई और रक्षात्मक बनी रहेगी। किंतु बंगाल में भाजपा के 'पूर्वी विस्तार' ने इस रणनीतिक भ्रम को सदैव के लिए दफन कर दिया है।

पाकिस्तानी सामरिक हलकों में यह चिंता सघन है कि भारत की पूर्वी सीमा का सुरक्षित और राजनीतिक रूप से समन्वित होना नई दिल्ली को पश्चिमी मोर्चे पर और अधिक आक्रामक ध्यान केंद्रित करने का अवसर प्रदान करेगा। बंगाल और असम में भाजपा की 'डबल इंजन' सरकारों का संगम पूर्वोत्तर भारत के अलगाववादी नेटवर्कों (नेटवर्कों) के लिए काल सिद्ध होगा। यह न केवल पाकिस्तान की 'हजार घावों की नीति' पर प्रहार है, बल्कि यह भारत के उस 'राष्ट्रीय केंद्रीकरण' का उद्घोष है जो कूटनीति की मेज पर अब अधिक दृढ़ता से बात करेगा।

## ड्रैगन की सतर्क दृष्टि तथा हिंद-प्रशांत का नया ध्रुव

इस वृहत गाथा में चीन का मौन प्रेक्षण अत्यंत महत्वपूर्ण है। बंगाल की खाड़ी आज हिंद-प्रशांतरणनीति का धड़कता हुआ हृदय बन चुकी है। कोलकाता पोर्ट (पोर्ट) और हल्दिया की सामरिक महत्ता, उत्तर-पूर्व को जोड़ने वाला 'चिकन नेक' कॉरिडोर (कॉरिडोर) और बंगाल की खाड़ी तक भारत की अबाध पहुच—ये सभी तत्व चीन की 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स' रणनीति के सम्मुख सबसे बड़ी बाधा हैं।

बंगाल में राजनैतिक स्थायित्व और राष्ट्रवादी

सरकार का अभ्युदय यह सुनिश्चित करता है कि भारत अब अपनी समुद्री और सीमाई सुरक्षा को किसी क्षेत्रीय राजनैतिक दबाव के अधीन नहीं आने देगा। चीन जो अब तक बंगाल के कुछ राजनैतिक हलकों में वैचारिक सहानुभूति खोजता था, आज उसे वहां एक ऐसी सामरिक दीवार का सामना करना पड़ रहा है, जिसकी नींव राष्ट्रवाद की शिलाओं से निर्मित है। यह विजय भारत को हिंद-प्रशांत क्षेत्र में एक अधिक सक्रिय और निर्णायक खिलाड़ी के रूप में स्थापित करती है।

## विपक्षी एकता का विखंडनः 'इंडी' ब्लॉक का अवसान

इन परिणामों ने विपक्षी 'इंडी' गठबंधन की आत्मा को ही झकझोर दिया है। यह चुनाव केवल भाजपा की जीत नहीं, बल्कि विपक्षी एकता के उस कृत्रिम ढांचे का विसर्जन है, जो केवल 'मोदी विरोध' के नकारात्मक साझा बिंदु पर टिका था। तमिलनाडु में कांग्रेस का अचानक टीवीके और अभिनेता विजय की ओर झुकना इस बात का प्रमाण है कि कांग्रेस अब क्षेत्रीय दलों की पिछलग्गू बनकर नहीं रहना चाहती। वह 'पोस्ट-स्टालिन' तमिलनाडु में स्वयं को निर्माता शक्ति के रूप में देख रही है।

वहीं, बंगाल में राहुल गांधी और ममता बनर्जी की 'मजबूरी वाली दोस्ती' का अंत अब निकट है। ममता बनर्जी को यह आभास हो चुका है कि कांग्रेस की राष्ट्रीय कमजोरी अब उनके अपने अस्तित्व के लिए बोझ बन रही है। दूसरी ओर, कांग्रेस के भीतर यह धारणा प्रबल हो रही है कि क्षेत्रीय क्षत्रप केवल अपनी सत्ता बचाने के लिए कांग्रेस का उपयोग 'सीट शेयरिंग' के नाम पर कर रहे हैं। केरलम में वामपंथ का कमजोर होना और भाजपा के वोट शेयर में उल्लेखनीय वृद्धि यह सिद्ध करती है कि अब भारतीय राजनीति में 'सॉफ्ट लेफ्ट' के लिए कोई स्थान शेष नहीं है। विपक्षी दल अब एक-दूसरे को ₹संपत्ति₹ के बजाय 'राजनैतिक बोझ' मानने लगे हैं। नेतृत्व का संकट और साझा वैचारिक एजेंडे (एजेंडे) का अभाव इस गठबंधन को 2027 के उत्तर प्रदेश चुनाव से पूर्व ही विखंडित कर सकता है।

## सांस्कृतिक राष्ट्रवादः टैगोर, बोस और सावरकर का नवीन समन्वय

बंगाल की यह जीत भाजपा के लिए केवल एक चुनावी आंकड़ा नहीं है, बल्कि यह उसके 'सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' के मॉडल की सबसे बड़ी वैचारिक सफलता है। लंबे समय तक यह तर्क दिया गया कि बंगाल का बौद्धिक समाज उत्तर भारतीय हिंदुत्व को कभी स्वीकार नहीं करेगा। किंतु भाजपा ने बंगाल में 'उत्तर भारतीय शैली₹ के स्थान पर ₹बंगाली सांस्कृतिक राष्ट्रवाद' का एक मौलिक संस्करण प्रस्तुत किया।

श्यामा प्रसाद मुखर्जी की विरासत को पुनः जीवित करना, बंकिमचंद्र के 'वंदे मातरम' को सीमा सुरक्षा के साथ जोड़ना और स्वामी विवेकानंद एवं सुभाष चंद्र बोस की वैचारिक पुनर्व्याख्या करना—यह एक ऐसा विमर्श था जिसने बंगाल के 'भद्रलोक' और 'शूद्र' समाज दोनों को एक साझा छतरी के नीचे ला खड़ा किया। 'तुष्टिकरण बनाम समान नागरिकता' का विमर्श अब बंगाल के प्रशासनिक डीएनए (DNA) का हिस्सा बनने जा रहा है। पाठ्यक्रमों में परिवर्तन, हिंदू पुनर्जागरण पर अधिक बल और सांस्कृतिक आयोजनों को सरकारी संरक्षण—ये सभी तत्व आने वाले वर्षों में बंगाल के सामाजिक-राजनैतिक चरित्र को सदैव के लिए बदल देंगे।

## 2029 की पदचापः एक नए भारत का उदय

पश्चिम बंगाल की यह ऐतिहासिक विजय 2029 के लोकसभा चुनाव का 'ट्रेलर' (ट्रेलर) मानी जा रही है। उत्तर भारत में अपनी सुदृढ़ता बनाए रखते हुए जब भाजपा पूर्वी भारत (बंगाल और ओडिशा) को अपने अभेद्य दुर्ग में परिवर्तित कर लेती है, तो वह भारतीय राजनीति के उस केंद्रीकृत मॉडल को पूर्णता प्रदान करती है जहाँ अब कोई भी क्षेत्र 'वैचारिक रूप से अजेय' नहीं रहा।

मतदाता अब स्थिरता, राष्ट्रवाद और विकास के 'ट्रिपल डोज' को प्राथमिकता दे रहा है। वह अब जातीय समीकरणों से ऊपर उठकर ₹राष्ट्रीय दृष्टि₹ की ओर बढ़ रहा है। यह भारतीय संघीय ढांचे के लिए एक चुनौती भी है और एक अवसर भी। अवसर इसलिए कि राजनैतिक स्थिरता आर्थिक प्रगति को गति देगी, और चुनौती इसलिए कि अत्यधिक केंद्रीकरण क्षेत्रीय आकांक्षाओं के स्वर को निर्बल कर सकता है। किंतु वर्तमान में, भारत एक ऐसे ₹राष्ट्रीय राजनैतिक गणराज्य₹ की ओर बढ़ रहा है जहाँ केंद्र की सत्ता ही राज्यों के विमर्श को निर्धारित कर रही है।

यह जनादेश यह प्रमाणित करता है कि भारत अब एक नए संक्रमण काल से गुजर रहा है। पश्चिम बंगाल, जो कभी भारत की वैचारिक चेतना का अग्रणी रहा है, आज स्वयं को एक नए रूप में परिभाषित कर रहा है। यह केवल सत्ता का हस्तांतरण नहीं है; यह समाज, पहचान और राजनैतिक चेतना के पुनर्गठन की एक सघन प्रक्रिया है। पूर्व से उठती यह नई ध्वनि—जो ₹सोनार बांग्ला₹ को 'अजेय भारत' के साथ जोड़ती है—अब सदैव के लिए भारतीय राजनीति की दिशा तय करेगी।

जब बंगाल करवट लेता है, तो इतिहास भी अपना मार्ग परिवर्तित करता है। 2026 की यह युद्ध-ज्वाला जब शांत होगी, तो राख के नीचे से जो बंगाल निकलेगा, वह अपनी प्राचीन जड़ों और आधुनिक राष्ट्रवाद के संगम से प्रदीप्त होगा।

126 सदस्यीय विधानसभा में 102 सीटों के प्रचंड बहुमत के साथ हिमंता बिस्वा सरमा ने पूर्वोत्तर के हृदयस्थल को भाजपा के अजेय दुर्ग में परिवर्तित कर दिया है। यह विजय केवल आंकड़ों का खेल नहीं, बल्कि एक संस्कृति के पुनर्जागरण की उद्घोषणा है।

# असमः हिमंता की 'कारीगरी' व विपक्ष का विसर्जन

लगातार तीसरी विजय की गूँज केवल दिसपुर के गलियारों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसने मुख्यमंत्री हिमंता बिस्वा सरमा के राजनैतिक कद को हिमालयी ऊंचाई प्रदान कर दी है। 2016 में जब भाजपा ने प्रथम बार सर्वानंद सोनोवाल के नेतृत्व में असम की देहरी लांघी थी, तब भी नेपथ्य में सरमा की कूटनीतिक 'कारीगरी' ही क्रियान्वित हो रही थी। 2021 में सत्ता की प्रत्यक्ष कमान संभालने के पश्चात, सरमा ने 2026 में जो परिणाम प्रस्तुत किए हैं, वे ऐतिहासिक विस्मय का विषय हैं। 126 सदस्यों वाली विधानसभा में भाजपा गठबंधन का 102 सीटों पर विजय ध्वज फहराना—जिसमें अकेले भाजपा की 82 सीटें सम्मिलित हैं—यह सिद्ध करता है कि असम अब पूर्णतः भाजपा की वैचारिक और सांगठनिक परिधि में समाहित हो चुका है। 2021 के 79 सीटों के आंकड़े से 102 तक की यह छलांग एक राजनैतिक सुनामी है जिसने विपक्ष के अस्तित्व को ही संकट में डाल दिया है।

## चुनौती देने वालों का अवसान

इस महासमर में सर्वाधिक आघात कांग्रेस के युवा चेहरे गौरव गोगोई को लगा है। तीन बार के सांसद और कांग्रेस की आशाओं के प्रतीक गोगोई को जोरहाट की माटी में भाजपा के हितेंद्र नाथ गोस्वामी के सम्मुख 23,000 से अधिक मतों के अंतर से पराजय स्वीकार करनी पड़ी। यह केवल एक विधानसभा क्षेत्र की हार नहीं थी, बल्कि यह 2016 के पश्चात से राज्य में कांग्रेस के निरंतर क्षरण का आधिकारिक प्रतिवेदन था। ऊपरी और उत्तरी असम, जिसे कभी कांग्रेस का अभेद्य गढ़ माना जाता था, वहां पार्टी का केवल एक सीट पर सिमट जाना यह दर्शाता है कि गोगोई की विरासत अब केवल स्मृतियों में शेष है। वरिष्ठ पत्रकारों के अनुसार, यह जनादेश केवल विपक्ष का तिरस्कार नहीं, बल्कि मुख्यमंत्री के प्रो-एक्टिव नेतृत्व पर जनता की अंतिम मुहर है।

## रणनीतिक विस्थापन

2026 के परिणामों ने असम के राजनैतिक भूगोल को पुनर्गठित कर दिया है। बांग्लादेश सीमा से लगे हुए वे क्षेत्र, जहां बंगाली भाषी मुसलमानों की सघन उपस्थिति थी और जो कभी कांग्रेस एवं बदरुद्दीन अजमल की एआइयूडीएफ के दुर्ग हुआ करते थे, अब केसरिया आभा से दीप्त हैं। अल्पसंख्यक मतों का रणनीतिक ध्रुवीकरण यद्यपि कांग्रेस के पक्ष में हुआ, किंतु एआइयूडीएफको गठबंधन से पृथक रखने की कूटनीति अंततः आत्मघाती सिद्ध हुई। युवा और प्रथम-बार के मतदाताओं ने, जिन्हें स्कॉलरशिप (स्कॉलरशिप) और कल्याणकारी योजनाओं का प्रत्यक्ष लाभ प्राप्त हुआ, धार्मिक जड़ताओं को त्यागकर विकास के नैरेटिव को प्राथमिकता दी।

संस्कृति, पहचान एवं परिसीमन का त्रिकोण

प्रोफेसर अखिल रंजन दत्ता के विश्लेषण के अनुसार, भाजपा की इस महाविजय के चार प्रमुख स्तंभ रहेः संस्कृति और पहचान, आकांक्षा और लाभ, अनवरत विकास और एक सुदृढ़ महानायक। भाजपा ने 'संस्कृति रक्षा' के विमर्श को केवल एक नारा नहीं रहने दिया, बल्कि उसे परिसीमन के माध्यम से विधिक स्वरूप प्रदान किया। परिसीमन का स्थानीय स्वदेशी समुदायों के भविष्य

**गौरव गोगोई की पराजय और कांग्रेस गठबंधन का विखंडन उस राजनैतिक शून्यता को दर्शाता है जो 'रणनीति' के अभाव में उपजती है। अरुनोदोई जैसी लोक-कल्याणकारी योजनाओं और परिसीमन के सूक्ष्म दांव ने विपक्ष के पारंपरकि वोट बैंकों को जड़ से विस्थापित कर उसे हाशिये पर धकेल दिया है।**

को सुरक्षित करने के अस्त्र के रूप में प्रस्तुत किया गया। आदिवासियों और बोडोलैंड के लिए आरक्षित सीटों में वृद्धि ने समुदायों के भीतर सुरक्षा का भाव संचरित किया।

यही नहीं, 'घुसपैठिए', 'लव जिहाद' और 'लैंड जिहाद' जैसे तीक्ष्ण शब्दों के प्रयोग और यूनिफॉर्म सिविल कोडके वादे ने सांस्कृतिक खतरों से निपटने की एक ऐसी मनोवैज्ञानिक बिसात बिछाई, जिसके सम्मुख विपक्ष का 'धर्मनिरपेक्षता' वाला तर्क अत्यंत निर्बल प्रतीत हुआ। अब असम में 1985 के समझौते के स्थान पर 1950 के विधिक प्रावधानों की चर्चा ने सीएए के साथ होने वाले संभावित टकरावों को भी कुशलता से टाल दिया है।

## आर्थिक संबल

राजनैतिक सत्ता तक पहुँचने का मार्ग अक्सर रसोई से होकर गुजरता है। 'अरुनोदोई' जैसी योजनाओं के माध्यम से लगभग 40 लाख महिलाओं को सीधे आर्थिक लाभ पहुँचाना भाजपा के लिए मास्टरस्ट्रोक सिद्ध हुआ। 'निजुत मोइना', 'निजुत सिपिनी' और 'लखपति बैदेओ' जैसी योजनाओं ने महिला मतदाताओं के भीतर एक स्थायी वफादारी निर्मित की। यह 'लाभार्थी राजनीति' का वह मॉडल है जिसने विपक्ष की सांगठनिक दुर्बलता और चुनाव से ठीक पूर्व हुए दलबदल के घावों को और भी गहरा कर दिया। विपक्ष केवल समाज के प्रबुद्ध वर्ग और बौद्धिक विमर्शों तक सीमित रहा, जबकि भाजपा का सांगठनिक नेटवर्क धरातल पर प्रत्येक द्वार को खटखटा रहा था।

## सरमा की राजनैतिक शिल्पकला

असम के ये चुनाव परिणाम यह सिद्ध करते हैं कि आधुनिक लोकतंत्र में केवल विचारधारा पर्याप्त नहीं है; उसके लिए एक कुशल 'शिल्पी' की आवश्यकता होती है। हिमंता बिस्वा सरमा ने ध्रुवीकरण और विकास के मध्य एक ऐसा सूक्ष्म संतुलन स्थापित किया है जिसे भेदना फिलहाल किसी भी शक्ति के लिए असंभव है। बंगाली हिंदुओं और चाय जनजातियों का अटूट समर्थन यह संकेत देता है कि सरमा ने असम की विविध सामाजिक परतों को एक सूत्र में पिरो दिया है।

असम का मतदाता आज अपने नेता में 'पहुंच', 'प्रभाव' और 'परिणाम' खोजता है, और सरमा इन तीनों ही मापदंडों पर खरे उतरे हैं। दिसपुर के सिंहासन पर उनकी यह तीसरी ताजपोशी पूर्वोत्तर भारत में भाजपा के एक ऐसे युग का प्रारंभ है, जहां 'संस्कृति' ढाल है और 'विकास' तलवार।

# केरलम

केरलम की राजनैतिक मृदा ने इस बार उस परंपरा को पुन: अंगीकार किया है, जिसे 2021 के व्यतिक्रम ने बाधित कर दिया था। माकपा के अभेद्य दुर्ग का ढहना केवल सत्ता का विस्थापन नहीं, बल्कि भारतीय राजनीति में वामपंथी स्वर्णकाल का औपचारिक अवसान है।

इन पांच विधानसभा चुनावों में यदि कोई परिणाम सर्वाधिक अपेक्षित, किंतु ऐतिहासिक रूप से मर्मभेदी रहा है, तो वह केरलम का जनादेश है। अरब सागर की लहरों के साये में बसे इस राज्य में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के नेतृत्व वाला 'वाम लोकतांत्रिक मोर्चा' (एलडीएफ) सत्ता की दहलीज से बाहर धकेल दिया गया है। केरलम की राजनीति में यह एक स्थापित परंपरा रही है कि सत्ता का हस्तांतरण प्रत्येक पांच वर्ष में 'एलडीएफ' और 'संयुक्त लोकतांत्रिक मोर्चा' (यूडीएफ) के मध्य होता रहता है। वर्ष 2021 में पिनराई विजयन ने दोबारा सत्ता प्राप्त कर इस 'मिथक' को तोड़ा था, किंतु 2026 की आंधी ने उस व्यतिक्रम को सुधारते हुए वामपंथ की जड़ों को हिलाकर रख दिया है।

इस बार का परिणाम केवल सामान्य सत्ता-परिवर्तन नहीं है; कुल 140 सीटों में से कांग्रेस नीत 'यूडीएफ' का 102 सीटें जीतना एक ऐसा कीर्तिमान है जिसने दक्षिण भारत की राजनैतिक बिसात को बदल दिया है। 1970 के पश्चात यह आधुनिक भारत के इतिहास में प्रथम अवसर है, जब किसी भी राज्य में वामपंथी दल के पास सत्ता का कोई सूत्र शेष नहीं है।

## विजयन का अवसान और व्यक्तित्व का बोझ

राजनैतिक विश्लेषकों का मानना है कि एलडीएफ की यह करारी शिकस्त विचारधारा की पराजय से अधिक तत्कालीन मुख्यमंत्री पिनराई विजयन की 'अलोकप्रियता' का प्रतिफल है। विजयन, जिन्होंने अपने प्रथम कार्यकाल में बाढ़ और महामारी के समय एक 'कुशल प्रशासक' की छवि गढ़ी थी, अपने दूसरे कार्यकाल में एक 'अधिनायकवादी' नेता के रूप में उभरकर सामने आए। शासन की समस्त शक्तियों का केंद्रीकरण और पार्टी के आंतरिक लोकतंत्र का क्रमिक विलोपन उनके पतन का मुख्य कारण बना।

विजयन पर लगे भाई-भतीजावाद के आरोपों और उनकी पुत्री पर लगे 'मनी लॉन्ड्रिंग' (मनी लॉन्ड्रिंग) के अभियोगों ने उस 'नैतिक आभा' को खंडित कर दिया, जो वामपंथी राजनीति की पूंजी मानी जाती थी। भ्रष्टाचार के इन काले बादलों ने माकपा के समर्पित कैडरों के मनोबल को भी पंगु

# का लाल सूर्यास्त

बना दिया। परिणाम यह हुआ कि 2021 में पचास हजार से अधिक मतों से विजयी होने वाले विजयन इस बार मात्र 19,247 मतों के सूक्ष्म अंतराल से अपनी सीट बचा सके। यह संकुचित अंतर स्वयं में एक मूक विलाप है, जो सत्ता के प्रति जन-आक्रोश को व्यक्त कर रहा है।

### विद्रोह की ज्वाला: जब अपनों ने ही छोड़ा साथ

एलडीएफ की पराजय का एक अत्यंत विद्रूप पक्ष पार्टी के भीतर उपजा वह विद्रोह था, जिसने संगठनात्मक ढांचे को छिन्न-भिन्न कर दिया। माकपा के आठ वरिष्ठ नेताओं का त्यागपत्र और स्वयं की पार्टी के विरुद्ध निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में खड़ा होना, विजयन की कार्यशैली पर एक तीखा प्रहार था। इनमें पूर्व मंत्री जी. सुधाकरन का नाम सर्वाधिक चर्चा में रहा, जिन्होंने कांग्रेस समर्थित निर्दलीय के रूप में 25,000 मतों के भारी अंतर से विजय प्राप्त की। सुधाकरन के साथ वी. कुन्हीकृष्णन और टीके गोविंदन जैसे बागियों ने यह सिद्ध कर दिया कि जब नेतृत्व निरंकुश हो जाता है, तो निष्ठाएं अपना मार्ग परिवर्तित कर लेती हैं। 21 में से 13 मंत्रियों का पराजित होना इस बात का प्रमाण है कि जनता ने समूचे शासन तंत्र को ही खारिज कर दिया है।

### वामपंथी स्वर्णकाल की अंत्येष्टि

ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो 2026 का यह वर्ष भारतीय वामपंथ के लिए एक 'शोकगीत' की भांति है। 1957 में जब केरलम में विश्व की प्रथम लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित कम्युनिस्ट सरकार बनी थी, तो वह एक नवीन युग का सूत्रपात था। उसके पश्चात पश्चिम बंगाल में ज्योति बसु का दो दशक लंबा शासन और त्रिपुरा में लेफ्ट का अजेय दुर्ग—ये सब भारतीय राजनीति के वह स्वर्णकाल थे जब वामपंथ एक अनिवार्य वैचारिक ध्रुव था। किंतु 2011 में बंगाल से ममता बनर्जी द्वारा निष्कासन, 2018 में त्रिपुरा की पराजय और अब 2026 में केरलम की सत्ता से विदाई—यह पतन का वह सिलसिला है जो अब पूर्णता को प्राप्त कर चुका है। नई पीढ़ी का मतदाता अब 'वर्ग संघर्ष' की पुरातन शब्दावली के स्थान पर रोजगार, आधुनिकता और पारदर्शी शासन की भाषा को प्राथमिकता दे रहा है।

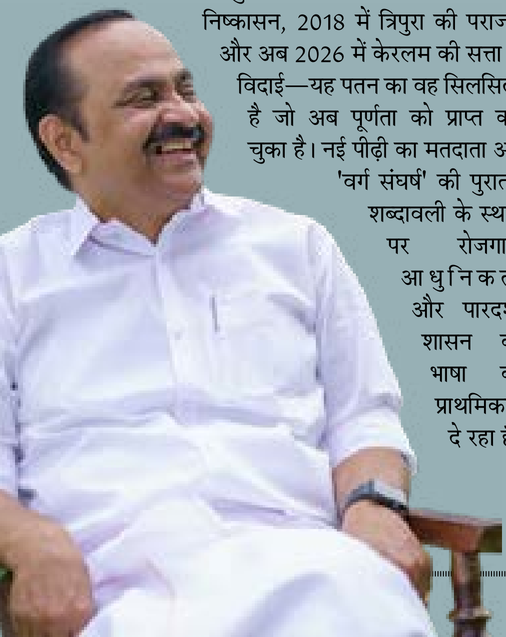

## अल्पसंख्यक समीकरण और 'नरम हिंदुत्व' का संशय

केरलम की राजनीति का ध्रुवीकरण सदैव अल्पसंख्यक मतों के इर्द-गिर्द घूमता रहा है। पिछले कुछ वर्षों में पिनराई विजयन पर 'नरम हिंदुत्व' की ओर झुकाव के आरोप निरंतर लगते रहे। विजयन के निकटवर्ती वेल्लापल्ली नाटेसन द्वारा मुसलमानों के विरुद्ध दिए गए प्रखर वक्तव्यों ने मुस्लिम समुदाय के भीतर असुरक्षा का भाव पैदा किया। माकपा की यह रणनीतिक भूल थी कि उसे लगा कि इस ध्रुवीकरण से हिंदू मत उसकी ओर आकर्षित होंगे, किंतु परिणाम इसके विपरीत हुए। मुस्लिम और ईसाई मतदाताओं ने, जो पहले एलडीएफ को एक 'सुरक्षित विकल्प' मानते थे, अब स्वयं को यूडीएफ की ओर मोड़ लिया। यूडीएफ की 102 सीटों की प्रचंड विजय में इस 'अल्पसंख्यक विस्थापन' की भूमिका निर्णायक रही है। कांग्रेस नेता राहुल गांधी की वायनाड से सक्रियता और केरलम के प्रति उनके भावनात्मक जुड़ाव ने भी यूडीएफ के पक्ष में एक सकारात्मक वातावरण निर्मित किया, जिसके लिए उन्होंने 'निर्णायक जनादेश' हेतु प्रदेश की जनता का आभार भी व्यक्त किया।

वामपंथी दल अपने वैचारिक जकड़न और बदलते समय के साथ सामंजस्य न बिठा पाने के कारण अब केवल ऐतिहासिक अवशेषों में सिमटते जा रहे हैं।

### भविष्य की पदचाप: एक नई राजनैतिक बिसात

यद्यपि वाम समर्थक इस हार को केवल पिनराई विजयन की व्यक्तिगत पराजय मानकर स्वयं को सांत्वना दे रहे हैं, किंतु यथार्थ इससे कहीं अधिक निष्ठुर है। विचारधारा जब व्यक्ति-पूजा के अधीन हो जाती है, तो वह समाज से अपना संपर्क खो देती है। भारतीय जनता पार्टी को यद्यपि तीन सीटें प्राप्त हुई हैं, किंतु उसके मत प्रतिशत में आई गिरावट यह संकेत देती है कि केरलम आज भी द्वि-ध्रुवीय राजनीति को ही प्राथमिकता दे रहा है, जहां हिंदुत्व का प्रयोग फिलहाल सफल नहीं हो सका है।

### निष्कर्ष: राख के नीचे दबे प्रश्न

1970 के दशक के उत्तरार्ध में प्रारंभ हुआ वामपंथी उत्कर्ष अब 2026 की दहलीज पर आकर ठहर गया है। केरलम की सड़कों पर अब लाल झंडे के स्थान पर तिरंगे का कोलाहल अधिक प्रखर है। यह निर्वाचन केवल एक सरकार के बदलने की कथा नहीं है, बल्कि यह एक चेतावनी है कि जो दल स्वयं का नवीनीकरण नहीं करते, इतिहास उन्हें विस्मृति के गर्त में धकेल देता है। पिनराई विजयन की सत्ता से विदाई के साथ ही भारतीय वामपंथ का वह अंतिम दीपक भी बुझ गया है जो किसी राज्य के सचिवालय में प्रज्वलित था। अब देखना यह है कि क्या यह राख पुनः सुलग पाएगी, या 2026 का यह रक्तवर्ण सूर्यास्त वामपंथ के राजनैतिक अवसान की अंतिम मुहर सिद्ध होगा।

# द्रविड़ दुर्ग का नूतन थलपति

तमिलनाडु की उर्वर राजनैतिक भूमि ने समय-समय पर अनेक विस्मयकारी और नाटकीय विवर्तन देखे हैं, किंतु वर्ष 2026 का विधानसभा निर्वाचन उस ऐतिहासिक संधि-स्थल के रूप में अंकित किया जाएगा, जब सिनेमा के वृहत रजत-पटल से उतरकर एक नायक ने सीधे सत्ता के शीर्ष सोपान पर अपनी निर्णायक पदचाप अंकित कर दी। यह केवल एक दल की चुनावी विजय नहीं थी; यह उस सुदृढ़ द्रविड़ राजनैतिक स्थापत्य में आया वह प्रचंड भूचाल था, जिसने दशकों से राज्य की नियति को नियंत्रित करने वाले द्वि-ध्रुवीय तंत्र—द्रमुक और अन्नाद्रमुक—की जड़ों को हिलाकर रख दिया। थलपति चंद्रशेखर जोसफ विजय का मुख्यमंत्री के रूप में शपथ ग्रहण करना आधुनिक भारतीय राजनीति के एक नए 'अधि-वृतांत' का अभ्युदय है।

SLMC NO. 37

तमिल जनमानस के 'थलपति' (सेनापति) चंद्रशेखर जोसफ विजय ने वह असंभव लक्ष्य प्राप्त कर दिखाया, जिसे रजनीकांत और कमल हासन जैसे दिग्गज अपनी अपार लोकप्रियता के पश्चात भी स्पर्श न कर सके। राजनीति के रणांगण में कूटनीतिक दृष्टि से 'नवागंतुक' माने जाने वाले विजय ने अपनी नवगठित पार्टी 'तमिलगा वेट्री कज़गम' (टीवीके) के माध्यम से प्रथम प्रयास में ही 234 में से 108 सीटों पर विजय ध्वज फहराकर राजनैतिक पंडितों को स्तब्ध कर दिया। यह परिणाम केवल सांख्यिकीय बढ़त नहीं है, बल्कि यह तमिलनाडु की राजनैतिक चेतना में आए उस पीढ़ीगत विस्थापन का प्रमाण है, जो अब पारंपरकि नेतृत्व की जड़ता से मुक्ति चाहती थी।

इस महासमर का सर्वाधिक प्रतीकात्मक और 'क्लाइमेक्स' (क्लाइमेक्स) जैसा क्षण वह था, जब निवर्तमान मुख्यमंत्री एम.के. स्टालिन को अपनी पारंपरकि और सुरक्षित सीट कोलातुर में 'टी वी के' के एक युवा योद्धा के सम्मुख पराजय स्वीकार करनी पड़ी। द्रमुक का 59 सीटों पर सिमट जाना और अन्नाद्रमुक का 47 सीटों तक सीमित रह जाना इस सत्य का उद्घोष है कि द्रविड़ राजनीति का वह प्राचीन और अभेद्य दुर्ग अब भीतर से दरक चुका है।

## विरासत और संघर्ष

विजय की सफलता का विश्लेषण केवल उनके 'स्टारडम' (स्टारडम) के चश्मे से करना अपूर्ण होगा। यद्यपि तमिलनाडु में सिनेमा और सत्ता का संबंध सात दशक पुराना है—जहाँ एम.जी. रामचंद्रन और जे. जयललिता जैसे विभूतियों ने फिल्मों से सचिवालय तक का मार्ग प्रशस्त किया था—किंतु उनके पास द्रविड़ आंदोलन की एक सुदृढ़ वैचारिक पृष्ठभूमि और वर्षों का सांगठनिक प्रशिक्षण था। इसके विपरीत, विजय के पास कोई राजनैतिक वंशावली नहीं थी। उनके पास था—युवा आकांक्षाओं का तीव्र स्पंदन, डिजिटल युग की सघन लामबंदी और व्यवस्था-विरोधी ऊर्जा का एक अनियंत्रित विस्फोट।

विख्यात फिल्म निर्माता एस.ए. चंद्रशेखर के पुत्र होने के पश्चात भी विजय का पथ कांटों भरा रहा। बाल कलाकार के रूप में प्रारंभ हुई उनकी यात्रा ने 'पूवे उनक्कागा' और 'कादलुक्कु मरियादाई' जैसी फिल्मों के माध्यम से लोकप्रियता के सोपान चढ़े। किंतु उनके राजनैतिक व्यक्तित्व का निर्माण उनकी बाद की फिल्मों—'मेर्सल', 'सरकार' और 'सरकार'—में निहित था। इन फिल्मों के कथानक में भ्रष्टाचार, सामाजिक अन्याय, औषधीय सिंडिकेट (सिंडिकेट) और सत्ता के अहंकार के विरुद्ध जो तीखे स्वर उभरे, उन्होंने विजय को एक अभिनेता की परिधि से निकालकर एक 'मसीहा' और 'व्यवस्था-विरोधी प्रतीक' के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया।

## जेन-जी का उन्माद

राजनैतिक विश्लेषकों का मत है कि विजय ने तमिलनाडु के मतदाताओं, विशेषकर 'जेन-ज़ी' पीढ़ी

**विख्यात फिल्म निर्माता एस.ए. चंद्रशेखर के पुत्र होने के पश्चात भी विजय का पथ कांटों भरा रहा। बाल कलाकार के रूप में प्रारंभ हुई उनकी यात्रा ने 'पूवे उनक्कागा' और 'कादलुक्कु मरियादाई' जैसी फिल्मों के माध्यम से लोकप्रियता के सोपान चढ़े।**

के साथ एक अलौकिक भावनात्मक तादात्म्य स्थापित किया। यह वह पीढ़ी है जो पारंपरकि राजनैतिक भाषणों की शुष्कता के स्थान पर डिजिटल छवियों, प्रतीकों और तीव्र भावनात्मक अपीलों को प्राथमिकता देती है। विजय ने अपनी कूटनीति में वैचारिक जटिलताओं के स्थान पर ₹भावनात्मक ध्रुवीकरण₹ का आश्रय लिया। उनके संवादों में नीतिगत सूक्ष्मताएं भले ही अल्प थीं, किंतु उनमें वर्तमान व्यवस्था के प्रति वह आक्रोश था जिसने तटस्थ मतदाताओं को भी सक्रिय कर दिया।

कमल हासन जैसे प्रबुद्ध नेताओं ने यद्यपि बौद्धिक और मुद्दा-आधारित राजनीति का प्रयास किया, किंतु वे जनसाधारण की नब्ज पकड़ने में विफल रहे। विजय ने राजनीति को बौद्धिक विमर्श के कक्षों से निकालकर सड़कों के कोलाहल और जन-आवेग की अभिव्यक्ति बना दिया। यही कारण है कि उनका अभ्युदय किसी पारंपरकि 'काडर' (काडर) आधारित दल की तुलना में एक वृहत 'नेटवर्क' (नेटवर्क) आधारित शक्ति के रूप में हुआ।

## फैनडम का राजनैतिक पूंजी में रूपांतरण

विजय की सर्वाधिक प्रखर रणनीतिक उपलब्धि उनके प्रशंसक संगठन 'विजय मक्कल इयक्कम' को एक सुव्यवस्थित राजनैतिक ढांचे में परिवर्तित करना था। वर्ष 2024 में 'टी वी के' की स्थापना के साथ ही उन्होंने अपने 'फैन क्लब' को एक अनुशासित चुनावी मशीनरी में ढाल दिया। उनकी जनसभाओं में उमड़ने वाला जनसैलाब केवल उत्साही युवाओं तक सीमित नहीं था; महिलाओं और प्रथम-बार मतदान करने वाले मतदाताओं की विशाल भागीदारी ने इस आंदोलन को एक व्यापक सामाजिक आधार प्रदान किया।

तमिलनाडु की जनसांख्यिकी में लगभग ढाई करोड़ मतदाता 40 वर्ष से कम आयु के हैं। विजय ने इस वास्तविकता को एक अचूक राजनैतिक अस्त्र के रूप में प्रयुक्त किया। उनके किशोर प्रशंसकों ने भी अपने परिवारों के भीतर 'ओपिनियन मेकर' की भूमिका निभाई। यह निर्वाचन केवल मतों का संग्रहण नहीं था, बल्कि यह 'फैनडम' को 'पॉलिटिकल कैपिटल' में रूपांतरित करने का एक सफलतम वैश्विक प्रयोग था।

## भविष्य की चुनौतियां

थलपति विजय का राज्याभिषेक यद्यपि एक उत्सव की भांति है, किंतु उनकी वास्तविक अग्निपरीक्षा अब प्रारंभ होती है। एक लोकप्रिय नायक होना और एक जटिल राज्य का कुशल प्रशासक होना, दो नितांत भिन्न विधाएं हैं। प्रश्न यह है कि क्या विजय एमजीआर की भांति अपनी इस लहर को एक स्थायी राजनैतिक विरासत में परिवर्तित कर पाएंगे?

राष्ट्रीय राजनीति के परिदृश्य में, भारतीय जनता पार्टी की बढ़ती आकांक्षाओं और केंद्र-राज्य संबंधों के तनावपूर्ण वातावरण में वे तमिल अस्मिता की रक्षा कैसे करेंगे? क्या उनका 'टी वी के' मॉडल केवल भावनात्मक संवेगों पर टिका रहेगा या वह एक सुदृढ़ संस्थागत शासन प्रणाली विकसित कर सकेगा? तमिलनाडु की औद्योगिक साख, शिक्षा व्यवस्था और कृषि संकट जैसे यथार्थवादी मुद्दों पर उनकी प्रतिक्रिया ही उनके भविष्य का निर्धारण करेगी।

## एक नवीन सवेरा

तमिल राजनीति का रंगमंच अब सदैव के लिए परिवर्तित हो चुका है। द्रविड़ गढ़ में एक नया ₹थलपति₹ अवतरित हुआ है, जिसकी हुंकार ने दक्षिण भारत की सत्ता-संरचना के नींव की ईंटों को विस्थापित कर दिया है। विजय का उदय केवल एक व्यक्ति का उत्कर्ष नहीं है, बल्कि यह उस नवीन राजनैतिक संस्कृति का उद्घोष है जहाँ डिजिटल युग की संवेदनाएं और करिश्माई व्यक्तित्व मिलकर पुरातन जड़ताओं को चुनौती दे रहे हैं।

मई 2026 की यह भोर तमिलनाडु के लिए केवल एक कैलेंडर का परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह एक युगांतर की पदचाप है। अब यह देखना रोचक होगा कि रुपहले पर्दे का यह सेनापति शासन की वास्तविक बिसात पर अपनी गोटियाँ कितनी कुशलता से बिछाता है।

# पुदुच्चेरीः रंगास्वामी का राजयोग

मनोज कुमार

लघु केंद्र शासित प्रदेश के चुनाव परिणाम कांग्रेस की उन ऐतिहासिक भूलों और वैचारिक संशय को पुनः सतह पर ले आए हैं, जो अक्सर उसकी राजनैतिक नियति बन जाते हैं। पुदुच्चेरी की सियासत की बिसात पर कांग्रेस अंत तक इसी उहापोह में फंसी रही कि उसे 'द्रमुक' के पारंपरकि साथ को प्राथमिकता देनी है या 'टीवीके' की उभरती लहर पर सवारी करनी है। इस कूटनीतिक अनिर्णय का परिणाम यह हुआ कि 'इंडिया ब्लॉक' के भीतर ही अंतर्कलह की ज्वाला प्रज्वलित हो गई। कांग्रेस ने गठबंधन के ही अंग 'वामपंथी दलों' के विरुद्ध अपने योद्धा उतार दिए, जिसका सीधा लाभ सत्ता के चतुर खिलाड़ी मुख्यमंत्री एन. रंगास्वामी ने उठाया। 30 सीटों वाली इस लघु विधानसभा में रंगास्वामी का जादू एक बार फिर सर चढ़कर बोला और एनडीए की सत्ता में वापसी सुनिश्चित हो गई।

## रंगास्वामी का वर्चस्व

चार बार के पूर्व कांग्रेसी मुख्यमंत्री और अब एआइएनआरसीके अधिनायक एन. रंगास्वामी ने यह सिद्ध कर दिया है कि स्थानीय अस्मिता और रणनीतिक गठजोड़ का संगम ही सत्ता की वास्तविक कुंजी है। भाजपा के साथ उनका गठबंधन यद्यपि आंतरिक विरोधाभासों से मुक्त नहीं था, फिर भी वे 16 सीटें प्राप्त कर बहुमत के जादुई आंकड़े को स्पर्श करने में सफल रहे। इस विजय में रंगास्वामी की व्यक्तिगत लोकप्रियता का बड़ा योगदान रहा; वे थट्टांचावडी और मंगलम दोनों ही दुर्गों को फतह करने में सफल रहे।

थट्टांचावडी की उनकी अपनी सीट पर यद्यपि कड़ा संघर्ष था, किंतु भाकपा और कांग्रेस के मध्य मतों के विभाजन ने उन्हें एक अभेद्य सुरक्षा कवच प्रदान कर दिया। रंगास्वामी

**फ्रांसीसी स्थापत्य और समंदर की लहरों के बीच बसे पुदुच्चेरी ने इस बार कूटनीति के उस पुराने पाठ को दोहराया है, जहां 'बिखराव' सदैव 'पराजय' का मार्ग प्रशस्त करता है। रंगास्वामी का अनुभव और विपक्ष की दुविधा इस चुनाव की मूल पटकथा सिद्ध हुई।**

ने 10,024 मत प्राप्त कर 4,441 मतों के अंतर से विजय श्री प्राप्त की। वहीं मंगलम में उनकी बढ़त और भी प्रभावी (7,050 मत) रही। यद्यपि रंगास्वामी का कद बढ़ा है, किंतु भाजपा के लिए ये परिणाम एक चेतावनी के समान हैं। पार्टी इस बार मात्र 4 सीटों पर सिमट गई, जबकि पिछले निर्वाचन में उसके पास 6 सीटें थीं। यह गिरावट दक्षिण के राज्यों में भाजपा के 'सीमित आकर्षण' की ओर संकेत करती है।

## इंडिया ब्लॉक के विखंडन की करुण गाथा

कांग्रेस के नेतृत्व वाले 'इंडिया ब्लॉक' के लिए यह परिणाम किसी सदमे से कम नहीं हैं। गठबंधन को मात्र 6 सीटों पर संतोष करना पड़ा, जिसमें द्रमुक ने 5 और कांग्रेस ने केवल 1 सीट पर विजय प्राप्त की। 2021 के चुनावों की तुलना में यह एक बड़ा अवसान है। कांग्रेस ने अपनी पूर्व की दो सीटों में से एक खो दी है, जो उसके सांगठनिक क्षरण का प्रमाण है। इस बिखराव का सर्वाधिक लाभ नई राजनैतिक शक्ति टीवीके को मिला, जिसने 2 सीटें जीतकर अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराई है। 'टीवीके' की इस सफलता ने कांग्रेस के खेमे में पश्चाताप की लहर पैदा कर दी है, क्योंकि वे समय रहते इस नई शक्ति को अपने पक्ष में नहीं कर सके।

## स्थानीय शक्ति और जीत के कीर्तिमान

इस निर्वाचन में एक स्थानीय दल भी 1 सीट जीतने में सफल रहा, जिसे भाजपा और कांग्रेस दोनों ही चुनाव से पूर्व अपने पाले में लाने का निष्फल प्रयास कर रहे थे। एनडीएके सहयोगी एलजेके और अन्नाद्रमुक भी अपना खाता खोलने में सफल रहे, जिसने रंगास्वामी की सरकार को एक बहुआयामी स्थिरता प्रदान की है। जीत के अंतर की दृष्टि से नेट्टापक्कम सीट पर एआइएनआरसी के पी. राजवेलू ने एक नया इतिहास रचा। उन्हें 13,665 मत प्राप्त हुए, जो इस पूरे चुनाव में जीत का सबसे वृहत अंतराल था। यह आंकड़ा दर्शाता है कि जहां कूटनीति स्पष्ट थी, वहां जनता ने अपना समर्थन मुक्त हस्त से प्रदान किया।

## दक्षिण का संदेश

पुदुच्चेरी के ये परिणाम स्पष्ट करते हैं कि विपक्ष की अस्मितावादी राजनीति तब तक सफल नहीं हो सकती, जब तक कि वह सांगठनिक एकता के धरातल पर न खड़ी हो। द्रमुक कई स्थानों पर द्वितीय स्थान पर रही, किंतु वह अपने जनाधार को सीटों के गणित में परिवर्तित करने में विफल रही। भाजपा की सीटों और मत प्रतिशत में आई कमी यह रेखांकित करती है कि 'राष्ट्रीय नैरेटिव' दक्षिण की मिट्टी में अभी भी जड़ें जमाने के लिए संघर्ष कर रहा है।

## किल चेन

# ऑपरेशन सिंदूर
# साइबर संप्रभुता का नया शंखनाद

संतु दास

मई 2025 की वह अभिशप्त रात्रि, जब भारतीय प्रक्षेपास्त्रों ने सीमा पार के आतंकी दुर्गों को भस्म किया, उससे पूर्व ही डिजिटल लोक में एक अदृश्य प्रलय का सूत्रपात हो चुका था। यह 'ऑपरेशन सिंदूर' के साये में लड़ा गया वह प्रथम पूर्णकालिक साइबर युद्ध था, जिसने भविष्य की सामरिक बिसात बदल दी।

### डिजिटल कुरुक्षेत्रः प्रथम प्रहार और विभीषिका

6-7 मई 2025 की वह मध्यरात्रि, जब भारतीय मिसाइलों ने पाकिस्तान और पाकिस्तान अधिकृत जम्मू-कश्मीर में स्थित आतंकवादी ढांचे को धूल-धूसरित किया, वह दृश्य केवल भौतिक विनाश तक सीमित नहीं था। वास्तव में, अप्रैल 2025 के पहलगाम हमले के उपरांत ही पाकिस्तान समर्थित हैकर समूहों और साइबर हमलावरों ने भारत के विरुद्ध एक समांतर 'डिजिटल जिहाद' का शंखनाद कर दिया था। 'ऑपरेशन सिंदूर' के प्रारंभ होते ही ये हमले अपनी चरम सीमा पर पहुँच गए। महाराष्ट्र साइबर के प्रतिवेदनों के अनुसार, भारत की डिजिटल सीमाओं पर लगभग 1 करोड़ घुसपैठ के प्रयास अंकित किए गए।

इसमें 'डिस्ट्रीब्यूटेड डिनायल-ऑफ-सर्विस' (डीडीओएस) हमलों का तांडव, 'फिशिंग' अभियानों का कपट और सरकारी वेबसाइटों का 'डिफेसमेंट' सम्मिलित था। विडंबना यह थी कि इन हमलों को 'डीपफेक' तकनीक से निर्मित भारत विरोधी दुष्प्रचार का भी संबल प्राप्त था, जिसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म 'एक्स' पर कई चीनी खातों ने भी प्रज्वलित किया। यद्यपि ये डिजिटल तरंगें युद्धभूमि के भौतिक यथार्थ को परिवर्तित करने में विफल रहीं, किंतु इन्होंने भारत की संस्थागत और परिचालनगत साइबर क्षमताओं की एक अग्निपरीक्षा अवश्य ली। एक वर्ष पश्चात, प्रश्न कमियों की उपस्थिति का नहीं, बल्कि उन कमियों को दूर करने की भारत की संकल्प शक्ति और साइबर प्रतिरोधकता का है।

### साइबर एट्रिब्यूशनः उत्तरदायित्व का जटिल कुहासा

सैद्धांतिक धरातल पर, साइबर प्रतिरोधक क्षमता पारंपरिक सामरिक ढांचे के ही समान है, जिसका उद्देश्य शत्रु के मानस में 'अस्वीकार्य परिणामों' का भय उत्पन्न करना है। यह दो स्तंभों पर टिका होता है—प्रथम, एक अभेद्य सुरक्षा व्यवस्था और द्वितीय, दंडात्मक जवाबी कार्रवाई की विश्वसनीयता। 'ऑपरेशन सिंदूर' के दौरान 'इनकार द्वारा निरोध' का पक्ष अत्यंत सफल रहा। पहलगाम हमले के तत्काल पश्चात 'भारतीय कंप्यूटर इमरजेंसी रिस्पॉन्स टीम' (सर्ट-इन) ने जो एडवाइजरी जारी किए, उन्होंने वित्तीय और महत्वपूर्ण अवसंरचना क्षेत्रों

को एक सुरक्षा कवच प्रदान किया। महाराष्ट्र साइबर के आंकड़े इसकी पुष्टि करते हैं कि 15 लाख प्रहारों में से मात्र 150 ही अपने लक्ष्य को भेद सके।

किंतु, इस युद्ध का सर्वाधिक जटिल पक्ष 'एट्रिब्यूशन' अर्थात 'उत्पत्ति की शिनाख्त' रहा। शत्रुओं ने अपनी भूमिका को विलोपित करने के लिए बांग्लादेश, मोरक्को और इंडोनेशिया जैसे तृतीय राष्ट्रों के सर्वरों का उपयोग किया। साइबर एट्रिब्यूशन के क्षेत्र में भारत का रिकॉर्ड अब तक ऐतिहासिक रूप से निर्बल रहा है। स्मरण रहे कि 2020 और 2022 में जब चीनी हैकर समूह 'रेडइको' ने भारतीय पावर ग्रिड को लक्ष्य बनाया था, तो उसकी पहचान भारतीय तंत्र ने नहीं, बल्कि एक अमेरिकी फर्म 'रिकॉर्डेड फ्यूचर' ने की थी। यह अनुभव सिद्ध करता है कि दायित्व निर्धारण की क्षमता ही प्रतिरोधक तंत्र की वास्तविक धार है।

## दंडात्मक प्रत्युत्तर: कूटनीति की नई तलवार

2019 में 'रक्षा साइबर एजेंसी' के गठन के पश्चात भारत ने अपनी आक्रामक साइबर क्षमताओं को परिष्कृत किया है। 'ऑपरेशन सिंदूर' प्रथम ऐसा अवसर था जब सक्रिय सैन्य अभियान और साइबर अभियान समांतर रूप से संचालित हुए। अगस्त 2025 में भारत द्वारा सार्वजनिक किया गया 'साइबरस्पेस संचालन के लिए संयुक्त सिद्धांत' (जेडीसीओ) इसी अनुभव का निचोड़ है। यह सिद्धांत प्रतिरोधक क्षमता के दो मौलिक तत्वों—'इनकार' और 'दंड'—को विधिक मान्यता प्रदान करता है।

भारत की आक्रामक मंशा अब छिपी नहीं है। 'जेडीसीओ' स्पष्ट रूप से 'बहु-स्तरीय लचीलापन' और 'विश्वसनीय साइबर रक्षा' की वकालत करता है। वहीं, 'सजा द्वारा निरोध' के अंतर्गत यह 'साइबर निरोध संचालन' की अवधारणा को अंगीकार करता है, जिसके माध्यम से शत्रु के तंत्र में व्यवधान, निषेध और पूर्ण विनाश सुनिश्चित किया जा सकता है। यह सिद्धांत एक प्रखर संदेश देता है कि साइबर प्रहार केवल साइबर क्षेत्र

तक सीमित नहीं रहेंगे, बल्कि राष्ट्रीय संप्रभुता के विरुद्ध किसी भी शत्रुतापूर्ण कृत्य का उत्तर अब डिजिटल और भौतिक, दोनों माध्यमों से दिया जाएगा।

## भावी रणनीतिः एआई और रणनीतिक स्पष्टता

हम एक ऐसे युग की देहरी पर खड़े हैं जहां 'कृत्रिम मेधा' (एआई) और 'एजेंटिक एआई' साइबर खतरों की प्रकृति को मौलिक रूप से परिवर्तित कर रहे हैं। राज्य-प्रायोजित साइबर समूह अब 'जनरेटिव एआई' का उपयोग कर अधिक घातक और सूक्ष्म प्रहार करने में सक्षम हैं।

'ऑपरेशन सिंदूर' के दौरान प्रसारित भारतीय नेतृत्व के 'डीपफेक' वीडियो भविष्य की उस विद्रूपता का पूर्वाभास थे, जहां सत्य और मिथ्या का भेद लुप्त हो जाएगा।

अतीत में परमाणु रणनीति के संदर्भ में 'रणनीतिक अस्पष्टता' ने भारत को लाभ पहुँचाया होगा, किंतु साइबर क्षेत्र के इस अंधकारमय कुरुक्षेत्र में अस्पष्टता आत्मघाती सिद्ध हो सकती है। यहाँ स्पष्टता ही सुरक्षा है। नई दिल्ली को अपनी साइबर सुरक्षा व्यवस्था की रिक्तियों को अविलंब भरना होगा।

'राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा रणनीति' (एनसीएसएस) का शीघ्र विमोचन और सैन्य एवं नागरिक तंत्र के मध्य एक निर्बाध समन्वय ही भारत को एक 'साइबर महाशक्ति' के रूप में प्रतिष्ठित करेगा।

## भविष्य का रणघोष

'ऑपरेशन सिंदूर' के एक वर्ष पश्चात, भारत की डिजिटल ढाल और तलवार दोनों ही पहले से अधिक प्रखर हैं। किंतु साइबर युद्ध एक अंतहीन प्रक्रिया है, जहां प्रत्येक सफलता केवल अगले संकट की प्रस्तावना मात्र है। हमें अपनी तकनीकी श्रेष्ठता को न केवल रक्षित करना है, बल्कि उसे एक ऐसे 'प्रतिरोधक अधि-वृतांत' में बदलना है जिसे भेदने का दुस्साहस कोई भी शत्रु न कर सके।

# वैधानिक विद्रूपता:

राकेश कुमार

दलबदल विरोधी कानून, जिसे कभी लोकतंत्र की शुचिता का रक्षक माना गया था, आज स्वयं ही राजनैतिक पाला-बदल का एक सुगम साधन बन चुका है। सांख्यिकी की ओट में जनादेश के सामूहिक अपहरण का यह दृश्य संसदीय मर्यादाओं पर एक गंभीर प्रश्नचिह्न है।

संविधान की दसवीं अनुसूची के अंतर्गत विधिक प्रावधानों की व्याख्या आज एक ऐसे विद्रूप मोड़ पर खड़ी है, जहां राजनैतिक निष्ठा का मापदंड अंतरात्मा नहीं, बल्कि केवल 'आंकड़ों का गणित' रह गया है। हालिया घटनाक्रम में आम आदमी पार्टी के सात राज्यसभा सदस्यों को, उन्हें चुनने वाले विधायकों की सम्मति के बिना ही, किसी अन्य राजनैतिक दल (भाजपा) को अपना अधिकार सौंपने की अनुमति प्रदान कर दी गई। यह आधुनिक भारतीय राजनीति का वह विरोधाभास है, जहां एक अकेला सांसद यदि अपनी अंतरात्मा की पुकार पर पार्टी व्हिप के विरुद्ध मतदान करे, तो उसे अपनी सदस्यता गंवानी पड़ती है; किंतु यदि वही अपराध 'थोक' में किया जाए, तो वह विधिक पुण्य बन जाता है। सांख्यिकी की यह मायावी शक्ति एक व्यक्ति के विचलन को 'अपराध' और समूह के विचलन को 'विलय' की संज्ञा देकर लोकतंत्र का उपहास उड़ा रही है।

## पंजाब का यथार्थ और गणतांत्रिक मखौल

इस कथित विलय की विडंबना पंजाब के परिप्रेक्ष्य में सर्वाधिक मुखर होकर उभरती है। जिस राज्य की विधानसभा में भारतीय जनता पार्टी के पास मात्र दो विधायक हैं, वहां इस कूटनीतिक कलाबाजी के पश्चात उसके राज्यसभा सदस्यों की संख्या छह हो गई है। यदि इसे जनमत के प्रतिशत में रूपांतरित किया जाए, तो भाजपा को मिले मात्र 0.6 प्रतिशत मतों के बदले उसे राज्यसभा में 67 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व प्राप्त हो गया है। यह दृश्य न केवल संसदीय प्रणाली का अपमान है, बल्कि उस गणतांत्रिक व्यवस्था की आत्मा पर प्रहार है, जो 'प्रतिनिधित्व' को 'जनादेश' का प्रतिबिंब मानती है।

यह कोई एकाकी घटना नहीं है; 2022 में आंध्र प्रदेश में भी इसी पटकथा की पुनरावृत्ति की गई थी, जब तेलुगु देशम के तीन राज्यसभा सदस्यों को अधिग्रहित किया गया था। यद्यपि 2024 के लोकसभा चुनावों के पश्चात समीकरणों ने नई करवट ली, किंतु 'पार्टी के भीतर पार्टी' निर्मित करने का यह उपक्रम पंजाब चुनावों से पूर्व एक सोची-समझी सामरिक बिसात प्रतीत होता है। 50 से अधिक विधायकों के संपर्क में होने के दावे और राघव चड्ढा जैसे नेताओं पर विधिक कार्रवाइयों का बढ़ता चक्र यह संकेत देता है कि नेपथ्य में एक वृहत राजनैतिक विस्थापन की योजना क्रियान्वित हो रही है।

## रक्षक से भक्षक तक का सफर

1985 में जब दलबदल रोकने के उद्देश्य से यह कानून निर्मित किया गया था, तब इसका लक्ष्य 1960 और 1970 के दशक की 'आया राम, गया राम' वाली अपवित्र संस्कृति को समाप्त करना था। चालीस वर्ष का समय एक लंबी अवधि होती है, और आज इस कानून का सर्वाधिक निर्बल पक्ष ही उसकी शक्ति बन गया है। राज्यसभा के सभापति के सम्मुख अब एकमात्र प्रश्न 'आंकड़ों की शुचिता' का होता है। दो-तिहाई का वह जादुई आंकड़ा राजनैतिक निष्ठा की कसौटी नहीं, बल्कि वह सीमा रेखा है जिसके पार पहुँचते ही नैतिकता की अनिवार्यता समाप्त हो जाती है।

दसवीं अनुसूची का अनुच्छेद4 आज स्वयं अपनी आवश्यकता से अधिक विस्तृत हो चुका है। यहाँ 'पार्टी' शब्द के तीन भिन्न अर्थों का द्वंद्व ही इस विडंबना की जड़ है। प्रथम, विधायिका के बाहर विद्यमान वह राजनैतिक संगठन जिसका अपना इतिहास और घोषणापत्र है; द्वितीय, विधायी पार्टी—अर्थात सदन के भीतर निर्वाचित सदस्यों का समूह; और तृतीय, वह चुनाव-चिह्न जिसे देखकर मतदाता अपनी पसंद निर्धारित करता है। अनुच्छेद4(2) की वर्तमान व्याख्या केवल विधायी पार्टी के दो-तिहाई बहुमत को विलय का आधार मानती है, जबकि अनुच्छेद4(1) में संगठन के विलय की अनिवार्य शर्त अंतर्निहित है।

# दलबदल का नया व्याकरण

विडंबना यह है कि पीठासीन अधिकारी, जो एक अकेले त्यागपत्र की स्वेच्छा और सत्यता की सूक्ष्म जांच करने के लिए विधिक रूप से बाध्य है, सात सदस्यों के सामूहिक पलायन परb3 केवल उनकी गिनती करने तक सीमित रह जाता है।

## न्यायिक हस्तक्षेप

2003 के 91वें संशोधन ने 'एक-तिहाई विभाजन' की विसंगति को तो समाप्त कर दिया था, किंतु 'दो-तिहाई विलय' का द्वार अभी भी खुला है। सर्वोच्च न्यायालय ने कुलदीप नैयर बनाम केंद्र (2006) के ऐतिहासिक वाद में राज्यसभा चुनावों में 'खुले मतदान' को वैध ठहराया था। न्यायालय का तर्क था कि चूंकि मतदाता स्वयं विधायक होते हैं, इसलिए उनके मतपत्र की गोपनीयता अनिवार्य नहीं है। इस सिद्धांत का विस्तार यदि वर्तमान परिस्थितियों में किया जाए, तो राज्यसभा सीटों के लिए उस राज्य विधानसभा की औपचारिक सम्मति अनिवार्य होनी चाहिए जिसने उन सांसदों को निर्वाचित किया था।

एक ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता है जहां विधानसभा के कुल बहुमत से पारित प्रस्ताव के बिना किसी भी सांसद के पाला-बदल को विधिक मान्यता न प्राप्त हो। दलबदल विरोधी कानून का मूल ध्येय सरकारों को अस्थिरता से बचाना था। यद्यपि राज्यसभा किसी सरकार के निर्माण या पतन में सीधी भूमिका नहीं निभाती, किंतु इसकी गरिमा और इसके प्रतिनिधियों की निष्ठा का प्रश्न लोकतंत्र के स्वास्थ्य के लिए अत्यंत संवेदनशील है। प्रत्यक्ष निर्वाचित सदन में मतदाता को पुनर्मूल्यांकन का अवसर प्राप्त होता है, किंतु परोक्ष सदन में दलबदल की सुरक्षा व्यवस्था और भी अधिक अभेद्य होनी चाहिए।

## मतदाता की अदृश्य पीड़ा

'अनुच्छेद4' के माध्यम से जब किसी राज्य की विधानसभा द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि अपनी मूल पार्टी को त्याग देते हैं, तो वह राज्य शेष कार्यकाल के लिए उस विचारधारा के अधीन हो जाता है जिसे उसने चुनावों में पराजित किया था।

इस प्रक्रिया में न तो उन विधायकों से परामर्श किया जाता है जिन्होंने मतदान किया था, और न ही उस जनता से जिसकी आवाज वे विधायक थे। 2006 में न्यायपालिका ने विधायक के वोट की शुचिता को सुरक्षित रखने का प्रयास किया था, और आज 2026 में, समय की पुकार है कि संसद वोट डाले जाने के पश्चात उसके 'वास्तविक अर्थ' और 'महत्व' को संरक्षित करे।

## भविष्य का शंखनाद

दलबदल विरोधी कानून आज स्वयं एक संकट काल से गुजर रहा है। यदि सांख्यिकी की शुष्कता इसी प्रकार राजनैतिक सुचिता को निगलती रही, तो वह दिन दूर नहीं जब सदन केवल अंकों की नुमाइश बनकर रह जाएंगे और जनमत केवल कागजों पर अंकित एक निर्जीव स्मृति। 2026 की यह राजनैतिक अस्थिरता एक अवसर है कि हम कानून की उन कमजोर कड़ियों को सुदृढ़ करें, जिन्होंने लोकतंत्र के रक्षक को ही उसका भक्षक बना दिया है।

जलज श्रीवास्तव

इतिहास के अनंत प्रवाह में कभी-कभी नियति किसी ऐसे चितेरे को जन्म देती है, जो समय की धूल को अपनी दृष्टि से स्वच्छ कर उसे एक कालजयी छवि में रूपांतरित कर देता है। रघु राय ऐसे ही एक दुर्लभ मनीषी थे। उनके महाप्रयाण के साथ भारत ने केवल एक महान छायाकार को नहीं खोया है, बल्कि अपनी सामूहिक स्मृति के उस मौन इतिहासकार को खो दिया है, जिसने कैमरे को मात्र एक यांत्रिक उपकरण नहीं, बल्कि आत्मा का दर्पण बना दिया था। 83 वर्ष की आयु में जब उन्होंने अंतिम श्वास ली, तब ऐसा प्रतीत हुआ मानो भारत की दृश्य-चेतना का एक विराट और वैभवशाली अध्याय धीरे-धीरे बंद हो गया हो।

## रघु राय

# रोशनी का अंतिम यात्री

भारत में फोटो पत्रकारिता को एक गंभीर कलात्मक और दार्शनिक अधिष्ठान प्रदान करने का श्रेय निर्विवाद रूप से रघु राय को ही समर्पित है।

रघु राय उन लोगों में अग्रणी थे जो केवल चित्र अंकित नहीं करते थे, वे समय को बंदी बना लेते थे। उनकी प्रत्येक छवि केवल किसी घटना का निर्जीव दस्तावेज नहीं थी, बल्कि वह मनुष्यता के स्पंदनों और धड़कनों का एक सूक्ष्म अनुवाद थी। उनके कैमरे की परिधि में सत्ता का दंभ था, करुणा की तरलता थी, मरुस्थल की धूल थी, आस्था का ज्वार था, और मृत्यु की निस्तब्धता भी। किंतु, इन सबके केंद्र में जो तत्व सदैव विद्यमान रहा, वह था—भारत। वही भारत, जो कभी बनारस के प्राचीन घाटों पर मोक्ष खोजता है, कभी भोपाल की उस अभिशप्त और विषाक्त रात्रि में विलाप करता है, कभी बंगाल के शरणार्थी शिविरों में क्षुधा से व्याकुल होता है, और कभी मदर टेरेसा की पवित्र हथेलियों में ईश्वरीय करुणा बनकर ठहर जाता है।

उनके निधन के पश्चात साझा की गई एक स्मृति विशेष रूप से अंतर्मन को उद्वेलित करती है। मेक्सिको की वह यात्रा, जहां फ्लेमिंगो पक्षियों से आच्छादित समुद्र का विस्तार था और नाव की रेलिंग थामे खड़े रघु राय की आंखों में वह बालसुलभ कौतूहल था—मानो समूचा संसार आज भी उनके लिए एक नूतन अन्वेषण हो। जब वे 'द मर्चेंट ऑफ इमेजेज' स्टूडियो में अपनी पत्नी गुरमीत सांघा राय के साथ उपस्थित हुए थे, तब भी उनमें वही निर्विकार सहजता और जिज्ञासा थी। प्रसिद्धि के हिमालयी शिखर पर प्रतिष्ठित होने के पश्चात भी उनके भीतर का वह जिज्ञासु यात्री सदैव जागृत रहा, और यही वह विरल गुण था जो उन्हें समकालीन कलाकारों की भीड़ से पृथक कर एक विशिष्ट गरिमा प्रदान करता था।

### विभाजन का दंश और सृजन की नींव

रघु राय का जन्म अविभाजित भारत के झंग (वर्तमान पाकिस्तान) की माटी में हुआ था। विभाजन की उस प्रलयंकारी विभीषिका ने उनके शैशव को स्पर्श किया था, और संभवतः उसी सामूहिक पीड़ा ने उनके भीतर उस संवेदना का बीजारोपण किया, जो कालांतर में उनकी तस्वीरों की आधारशिला बनी। नियति उन्हें अभियांत्रिकी की शुष्क दुनिया की ओर ले जा रही थी, किंतु विधाता ने उनके हाथों में कैमरे का 'जादुई अस्त्र' थमा दिया। यह एक किंवदंती की भांति प्रसिद्ध है कि एक साधारण गधे की तस्वीर ने उनके जीवन की दिशा को सदैव के लिए परिवर्तित कर दिया। वही एक पल उन्हें द स्टेट्समैन की देहरी तक ले गया और फिर वहां से भारतीय फोटो फोटो पत्रकारिता के इतिहास का स्वर्णिम लेखन प्रारंभ हुआ।

भारत में फोटो पत्रकारिता को एक गंभीर कलात्मक और दार्शनिक अधिष्ठान प्रदान करने का श्रेय निर्विवाद रूप से रघु राय को ही समर्पित है। उनसे पूर्व, समाचार पत्रों में चित्रों को केवल रिक्त स्थान भरने वाली सजावट माना जाता था; उनके आगमन के पश्चात तस्वीरें

स्वयं में एक मुकम्मल समाचार बन गईं। उन्होंने कैमरे को सत्ता के सम्मुख एक निर्भीक प्रहरी की भांति खड़ा कर दिया। वे केवल घटना के साक्षी नहीं होते थे—वे उस घटना के अंतस में प्रविष्ट होकर उसके सत्य को बाहर निकाल लाते थे।

## इतिहास के रक्तवर्ण साक्षी

1971 के बांग्लादेश मुक्ति संग्राम की वे मर्मभेदी छवियां हों, या इंदिरा गांधी के युग का वह उथल-पुथल भरा राजनैतिक कालखंड, ऑपरेशन ब्लू स्टार की विभीषिका हो या भोपाल गैस त्रासदी का वह काला अध्याय—रघु राय ने केवल दृश्य अंकित नहीं किए, उन्होंने इतिहास की धमनियों में प्रवाहित होने वाले रक्त और पीड़ा को स्थिर कर दिया। भोपाल गैस त्रासदी के पश्चात उस मृत बालक के अर्ध-दबे चेहरे वाली उनकी वह कालजयी तस्वीर आज भी आधुनिक औद्योगिक सभ्यता के अपराध का सर्वाधिक प्रखर दृश्य-प्रमाण मानी जाती है। वह चित्र केवल एक मृत देह का नहीं था; वह प्रगति के नाम पर की गई मानवता की हत्या का एक मौन किंतु प्रचंड अभियोग था।

## 'सीइंग' से 'दर्शन' तक

रघु राय की कला का सबसे विलक्षण पक्ष यह था कि वे भारत को किसी बाह्य पर्यवेक्षक की भांति नहीं देखते थे। वे भारत को अपने भीतर अनुभव करते थे। उनके लिए फोटोग्राफी केवल 'सीइंग' अर्थात देखना नहीं थी, बल्कि वह 'दर्शन' की एक प्रक्रिया थी। वे स्वयं स्वीकार करते थे कि हिंदी का शब्द ₹दर्शन₹ उन्हें सर्वाधिक प्रिय है—किसी वस्तु को उसकी पूर्णता में देखना, उसके अंतर्संबंधों को समझना और जीवन के उन अदृश्य सूत्रों को पहचानना जो दृश्य जगत को संचालित करते हैं। यही कारण है कि उनकी तस्वीरों में केवल मनुष्य का मुखमंडल नहीं दिखता; उस मुखाकृति के नेपथ्य में खड़ा समय, समाज की जड़ता और वह सघन मौन भी मुखर हो उठता है, जो शब्दों की सीमा से परे है।

वे विश्वविख्यात हेनरी कार्टियर-ब्रेसों के उन शिष्यों में थे जिन्हें ब्रेसों ने स्वयं अपनी बौद्धिक विरासत का वाहक माना था। 1977 में प्रतिष्ठित 'मैग्नम फोटोज' से जुड़ने का निमंत्रण प्राप्त करना केवल उनकी व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं थी; यह भारतीय दृष्टि को प्राप्त वह वैश्विक विधिक मान्यता थी, जिसने पश्चिम के उस चश्मे को तोड़ दिया जो भारत को केवल निर्धनता और रहस्यवाद के संकुचित फ्रेम में देखता था। रघु राय ने विश्व को यह दिखाया कि भारत विरोधाभासों का देश अवश्य है, किंतु वह असाधारण जीवंतता, रंगों के उत्सव, गहन पीड़ा और उच्चतम आध्यात्मिकता का एक विराट महासागर भी है।

## द्वंद्व और सौंदर्य का सामंजस्य

उनकी कला में एक अद्भुत द्वंद्व निरंतर सक्रिय रहा—वे अत्यंत क्रूर और नग्न यथार्थ को भी सौंदर्य की दार्शनिक गहराई के साथ पकड़ने में सक्षम थे। वे बनारस के घाटों पर भस्म रमाए बैठे किसी अनाम साधु को भी उसी श्रद्धा और सूक्ष्मता से देखते थे, जिस निष्ठा से वे किसी शक्तिशाली प्रधानमंत्री को देखते थे। मदर टेरेसा के मुख की उन झुर्रियों में उन्हें करुणा का संपूर्ण ब्रह्मांड दृष्टिगोचर होता था, तो किसी धूल भरी सड़क पर बैठे अनाम बालक की आंखों में उन्हें भविष्य का अनजाना भय दिखाई देता था। यही वह कारण है कि रघु राय की तस्वीरें कभी काल-बाह्य नहीं होतीं। वे समय की सीमाओं से मुक्त प्रतीत होती हैं। उनमें वह 'क्षण' तो सुरक्षित है, किंतु वह क्षण एक शाश्वत अनुभव में रूपांतरित हो चुका है।

## डिजिटल युग और रघु राय की प्रासंगिकता

आज के इस तीव्रगामी डिजिटल युग में, जहां प्रत्येक हस्त में कैमरा है और प्रत्येक पल सोशल मीडिया के शोर में विलीन हो रहा है, रघु राय की अनुपस्थिति और भी अधिक पीड़ादायक अनुभव होती है। वे उस पीढ़ी के अंतिम प्रहरियों में थे जो 'फ्रेम' का चयन करने से पूर्व जीवन के स्पंदन को महसूस करती थी। उनका दृढ़ विश्वास था कि एक श्रेष्ठ तस्वीर कैमरे की तकनीक से नहीं, बल्कि छायाकार की संवेदना से निर्मित होती है। उन्होंने कभी भी छवि को कृत्रिम रूप से सुसज्जित करने में विश्वास नहीं किया। वे उस एक 'निर्णायक क्षण' की प्रतीक्षा करते थे, जब सत्य स्वयं प्रकाश की किरणों में उतरकर उनके bbलेंस के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दे।

उनके अंतिम संस्कार का वह दृश्य अपने आप में एक मर्मस्पर्शी कविता की भांति था—उनके पार्थिव शरीर के सीने पर एक 'निकॉन जेड 8' कैमरा और एक पुरानी 'कोडक' फिल्म रखी गई थी। यह दृश्य उस महान कलाकार की संपूर्ण यात्रा का सार था, जिसने फिल्म के रासायनिक युग से प्रारंभ कर डिजिटल के विद्युत युग तक का मार्ग तय किया, किंतु अपनी दृष्टि की शुचिता और पवित्रता को कभी आंच नहीं आने दी।

## रोशनी का अमिट हस्ताक्षर

रघु राय का प्रस्थान केवल कला-जगत की एक अपूरणीय क्षति नहीं है। यह उस भारत की क्षति है, जो आज भी स्वयं को अपनी आंखों से देखने की कला सीख रहा है। उन्होंने हमें यह बोध कराया कि कैमरा केवल एक निर्जीव मशीन नहीं है, बल्कि वह मनुष्य की नैतिक उत्तरदायित्व का एक सशक्त माध्यम भी है। उन्होंने सिद्ध किया कि तस्वीरें केवल 'सुंदर' होने के लिए नहीं होतीं; उन्हें 'सत्य' होना अनिवार्य है।

आज जब हम उनकी संकलित तस्वीरों के वीथिकाओं से गुजरते हैं, तो ऐसा आभास होता है मानो भारत स्वयं अपने अतीत के गलियारों में भ्रमण कर रहा हो—कहीं धूल का गुबार उड़ रहा है, कहीं संध्या की आरती हो रही है, कहीं कोई सिसक रहा है, तो कहीं कोई मंद मुस्कान बिखेर रहा है। और उन सबके मध्य एक शांत, धैर्यवान और श्वेत केशों वाला मनुष्य कैमरा लिए अडिग खड़ा है—प्रकाश और छाया के उस शाश्वत नृत्य के बीचमनुष्यता की खोज करता हुआ।

रघु राय शारीरिक रूप से विदा हो चुके हैं, किंतु उनका निर्मित किया हुआ भारत सदैव जीवित रहेगा—उनकी तस्वीरों में, उनकी पारदर्शी दृष्टि में, और उस सघन मौन में, जिसे उन्होंने अपनी रोशनी से भर दिया था। वे वास्तव में रोशनी के उस अंतिम यात्री थे, जिसकी पदचाप आने वाली शताब्दियों तक फोटोग्राफी के इतिहास को आलोकित करती रहेगी।

# मेधा का

अनवर हुसैन

भूमंडल के इस नवीन प्रहर में, शिक्षा अब केवल भौगोलिक प्रवासन तक सीमित नहीं रही। सरहदों को लांघती यह 'ट्रांसनेशनल' शिक्षा व्यवस्था अब भारत की ज्ञान-परंपरा और वैश्विक विमर्श के मध्य एक नवीन कूटनीतिक सेतु का निर्माण कर रही है।

# महासंगम

दशकों तक, भारतीय मेधा की नियति केवल सात समंदर पार के विश्वविद्यालयों के गलियारों में ही सुरक्षित मानी जाती रही। अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों की ओर प्रस्थान करना सफलता का एकमात्र आधिकारिक प्रतिवेदन बन गया था। बेहतर संस्थानों में प्रविष्टि प्राप्त करने, वैश्विक अनुभव को आत्मसात करने और अध्ययनोपरांत वैभवशाली अवसरों की खोज में प्रतिवर्ष लाखों भारतीय छात्र अपनी मातृभूमि का त्याग करते रहे हैं। किंतु, 2026 की इस बदलती राजनैतिक और तकनीकी पृष्ठभूमि में, शिक्षा के लिए होने वाली इस आवाजाही का अर्थ अब किसी एक भौगोलिक स्थान पर जड़वत हो जाना नहीं रहा। यह अब एक 'मॉड्यूलर' और विस्तृत प्रक्रिया में रूपांतरित हो रही है, जहां शिक्षा की संप्रभुता सीमाओं की मोहताज नहीं है। अब एक छात्र अपनी डिग्री के दौरान विभिन्न देशों, संस्थानों और वर्चुअल माध्यमों के एक ऐसे जाल में विचरण करता है, जहां उसे घर बैठे ही अंतरराष्ट्रीय स्तर की श्रेष्ठता प्राप्त होती है।

उच्च शिक्षा के इस नवीन युग को 'ट्रांसनेशनल' शिक्षा मॉडल के रूप में परिभाषित किया जा रहा है। यूनेस्को और यूरोप कौंसिल के मानदंडों के अनुसार, यह एक ऐसी व्यवस्था है जहां छात्र उस राष्ट्र के नहीं होते जहां शिक्षण संस्थान स्थित है। इसमें अब छात्र गतिशील नहीं हैं, बल्कि स्वयं संस्थान अपनी सीमाओं का विस्तार कर रहे हैं। भारत इस वैश्विक प्रवाह के साथ अत्यंत प्रगाढ़ता से जुड़ रहा है, जहां शाखा परिसरों की स्थापना से लेकर हाइब्रिड मॉडल तक, शिक्षा का एक नया कुरुक्षेत्र निर्मित हो रहा है।

गुजरात की 'गिफ्ट' सिटी में डीकिन यूनिवर्सिटी और वोलोंगोंग यूनिवर्सिटी के परिसरों का अभ्युदय हो या अबू धाबी और ज़ांज़ीबार में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान का विस्तार, ये सभी उदाहरण इस सत्य की पुष्टि करते हैं कि शिक्षा अब एक भौगोलिक विवशता नहीं, बल्कि एक रणनीतिक विस्थापन है।

**नियमन की संकुचित परिधि से निकलकर अब भारत को रणनीतिक साझीदारी के उस विराट आकाश की ओर देखना होगा, जहां गुणवत्ता और शोध ही प्राथमिक मापदंड हों। अकादमिक क्रेडिट के वैश्विक हस्तांतरण और समावेशी ढांचे के निर्माण से ही भारतीय छात्र इस तकनीकी महायुद्ध में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर पाएंगे।**

इस बदलते परिदृश्य में फ्रैंचाइज़और ट्विनिंग जैसे मॉडलों ने अकादमिक जगत में एक नई हलचल पैदा कर दी है। स्थानीय संस्थानों द्वारा विदेशी पाठ्यक्रमों का संचालन और छात्र द्वारा अपने अध्ययन का कुछ भाग स्वदेश एवं कुछ भाग विदेश में पूर्ण करना, अब एक सामान्य विधिक प्रक्रिया बन चुकी है। संयुक्त और ड्यूल डिग्रियों का बढ़ता चलन छात्रों को एक ही समय में दो भिन्न संस्कृतियों और संस्थागत दर्शनों से परिचित कराता है। सिम्बायोसिस और डीकिन यूनिवर्सिटी जैसी साझीदारियां इसी नवीन कूटनीति का प्रमाण हैं। इसके साथ ही, डिजिटल प्लेटफॉर्मों और ऑनलाइन शिक्षा के माध्यम से 'स्वयं' जैसे कार्यक्रमों ने वैश्विक पाठ्यक्रमों को भारतीय रसोइयों और दीवानखानों तक पहुँचा दिया है। यह हाइब्रिड और मिश्रित पाठ्यक्रमों का वह युग है, जहां शिक्षा का प्रबंधन स्थिर संस्थानों के बजाए निरंतर प्रवाहमान शिक्षार्थियों और प्रमाण-पत्रों के प्रबंधन की ओर मुड़ गया है।

भारत के नीतिगत ढांचे के सम्मुख अब यह अनिवार्य चुनौती खड़ी है कि वह केवल नियंत्रण और नियमन की शुष्क भाषा में न सोचे। शिक्षा-प्रशासन का दायरा अब केवल दिशा-निर्देश जारी करने तक सीमित नहीं रह सकता। भारत को अब उच्च गुणवत्ता वाली उन रणनीतिक साझीदारियों की ओर बढ़ना चाहिए जो देश की घरेलू आवश्यकताओं के साथ संरेखित हों। सतही मॉडलों के स्थान पर शोध और नवाचार को प्राथमिकता देने वाली लंबी साझीदारियां ही भारत के नॉलेज हब बनने के स्वप्न को साकार कर सकती हैं। पाठ्यक्रमों का आधुनिकीकरण और फैकल्टी के प्रशिक्षण में वैश्विक मानकों का समावेश इस संक्रमण काल की प्राथमिक मांग है। हमें नियमन के उस पारंपरिक चश्मे को उतारना होगा जो केवल प्रवेश को नियंत्रित करने पर बल देता है, और उसके स्थान पर गुणवत्ता के उस क्षितिज को देखना होगा जहां शोध ही अंतिम सत्य है।

भौगोलिक सीमाओं के पार वैश्विक जुड़ाव के लिए भारत ने यद्यपिएकेडमिक बैंक ऑफ क्रेडिट्स के माध्यम से एक सुदृढ़ आधारशिला रखी है, किंतु वर्तमान में इसकी प्रकृति अत्यंत घरेलू है। इसकी प्रभावकारिता तभी सिद्ध होगी जब इसे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रसारित किया जाए। भारतीय और विदेशी संस्थानों के मध्य एक मानकीकृत ऋण हस्तांतरण संरचना का निर्माण समय की पुकार है। जब तक डिग्री की मान्यता के नियम पारदर्शी और वैश्विक नहीं होंगे, तब तक छात्रों की पोर्टेबिलिटी एक मृगतृष्णा ही बनी रहेगी। शिक्षा का यह प्रवाह केवल उन लोगों तक सीमित नहीं रहना चाहिए जो इसे वहन कर सकें। समानता पर आधारित एक समावेशी डिजाइन तैयार करना राज्य का नैतिक उत्तरदायित्व है। निर्धन और मेधावी छात्रों के लिए छात्रवृत्ति की व्यवस्था और आवश्यकता-आधारित शुल्क संरचना ही इस वैश्विक शिक्षा को लोकतांत्रिक बना सकती है।

गुणवत्ता के प्रति भारत का दृष्टिकोण अब तक केवल इनपुट या प्रविष्टि-आधारित रहा है, जहां किसी संस्थान की श्रेष्ठता उसकी रैंकिंग और भौतिक ढांचे से आंकी जाती थी। किंतु अब समय आ गया है कि हम आउटपुट या परिणामों पर आधारित गुणवत्ता की

ओर मुड़ें। विदेशी संस्थानों के भारतीय परिसरों और हाइब्रिड पाठ्यक्रमों की शुचिता बनाए रखने के लिए यूनेस्को-ओईसीडी द्वारा निर्धारित सिद्धांतों को अपनाना अनिवार्य है। इसके साथ ही, एक ऐसे डेटा-आधारित तंत्र की आवश्यकता है जो निरंतर यह निगरानी कर सके कि इस सीमा-पार शिक्षा से हमें वास्तविक रूप में क्या प्राप्त हो रहा है। आय, लिंग और क्षेत्र के आधार पर शिक्षार्थियों के मध्य मौजूद कमियों को पहचानना और उन्हें दूर करना ही इस तंत्र की सफलता का मापदंड होगा। 'ट्रांसनेशनल' शिक्षा केवल एक अकादमिक विषय नहीं है, बल्कि यह आप्रवासन, आर्थिक नीति और कौशल विकास जैसे अनेक संवेदनशील क्षेत्रों से परोक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। इसलिए, भारत की नीतियों में एक ऐसी समग्रता होनी चाहिए जो कृत्रिम मेधा और हरित कौशल जैसे भविष्य के क्षेत्रों में श्रम बाजार की आवश्यकताओं का संज्ञान ले सके। पलायन को रोकने से लेकर एक एकीकृत उच्च शिक्षा पारिस्थितिकी तंत्र को आकार देने तक, भारत के सम्मुख यह एक ऐतिहासिक अवसर है। अंतरराष्ट्रीय शिक्षा के ये दोहरे उद्देश्य—मेधा के पलायन को न्यून करना और वैश्विक अनुभवों को प्रखर बनाना—तभी पूर्ण हो सकते हैं जब हम घरेलू व्यवस्थाओं को वैश्विक एकीकरण के साथ पूर्णतः समन्वित कर दें। अंततः, भारत एक ऐसी संधि-बेला पर खड़ा है जहां उसे स्वयं को एक वैश्विक ज्ञान-शक्ति के रूप में पुनः प्रतिष्ठित करना है। यह केवल विदेशी विश्वविद्यालयों को आमंत्रित करने का प्रश्न नहीं है, बल्कि अपनी मेधा को एक ऐसा परिवेश प्रदान करने का संकल्प है जहां उसे अपनी जड़ों से जुड़े रहते हुए भी संपूर्ण विश्व की श्रेष्ठता प्राप्त हो सके। क्या हम इस विवर्तनिक परिवर्तन के लिए सन्नद्ध हैं? उत्तर हमारी नीतिगत दूरदर्शिता और कूटनीतिक साहस में छिपा है। ज्ञान का यह क्षितिज अब किसी की प्रतीक्षा नहीं करेगा; भारत को स्वयं ही अपनी पदचाप से भविष्य की इबारत लिखनी होगी।

# बिसात पर बालेन

मनोज कुमार

काठमांडू की घाटियों में इस बार वसंत केवल ऋतु परिवर्तन का संदेश लेकर नहीं आया, बल्कि इसने नेपाल के राजनैतिक इतिहास के एक अत्यंत सघन और जड़वत अध्याय का समापन कर दिया। 5 मार्च 2026 की वह संध्या, जब निर्वाचन के परिणामों ने दशकों से स्थापित 'वृद्धतंत्र' और पारंपरकि दलों के दुर्गों को ढहा दिया, वह केवल सत्ता का हस्तांतरण नहीं थी। वह नेपाल के उस 'अधि-वृतांत' का विसर्जन था, जिसमें राजनैतिक अभिजात वर्ग ने सत्ता को 'म्यूजिकल चेयर' के खेल में सीमित कर दिया था। 27 मार्च 2026 को जब राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी के बालेन्द्र शाह ने नेपाल के सबसे युवा प्रधानमंत्री के रूप में शपथ ग्रहण की, तो हिमालय के उस पार बीजिंग के सत्ता-गलियारों में एक असाधारण मौन और सतर्कता व्याप्त हो गई। काठमांडू का यह नवीन राजनैतिक विवर्तन अब ड्रैगन के लिए 'प्रतीक्षा करो और देखो' की उस सामरिक विवशता का कारण बन गया है, जो सामान्यतः कम्युनिस्ट कूटनीति का स्वभाव नहीं रही है।

राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी की यह प्रचंड विजय केवल यथास्थिति को चुनौती देने का परिणाम नहीं है, बल्कि यह उस संचित जन-आक्रोश की परिणति है, जो नेपाल के पारंपरकि नेतृत्व की अकर्मण्यता और भ्रष्टाचार के विरुद्ध वर्षों से सुलग रहा था। बालेन्द्र शाह का शासन मॉडल परिणाम-उन्मुख, सूक्ष्म जांच पर आधारित और कठोर जवाबदेही के सिद्धांतों पर केंद्रित है। यह एक ऐसी राजनैतिक भाषा है, जिसे नेपाल का युवा मानस तो समझता है, किंतु बीजिंग और नई दिल्ली के पारंपरकि कूटनीतिक तंत्र के लिए यह एक पहेली बनी हुई है।

घरेलू स्तर पर जहाँ शाह के सम्मुख संरचनात्मक सुधारों की हिमालयी चुनौती है, वहीं विदेश नीति के धरातल पर उनसे उन सिद्धांतों की रक्षा की अपेक्षा है, जो नेपाल की संप्रभुता के आधार रहे हैं। नई सरकार का प्राथमिक उद्देश्य नेपाल को भारत और चीन के मध्य केवल एक बफर स्टेट नहीं, बल्कि एक सक्रिय 'महासेतु' के रूप में पुनः प्रतिष्ठित करना है। यह संतुलित और गुटनिरपेक्ष दृष्टिकोण सुरक्षा या सैन्य आलिंगनों से बचते हुए दोनों पड़ोसियों की आर्थिक समृद्धि का लाभ उठाने की एक प्रैग्मेटिक चेष्टा है। चीन के लिए नेपाल का महत्व पिछले दशकों में निरंतर बढ़ा है, जो न केवल दक्षिण एशिया में उसके विस्तारवादी दृष्टिकोण का हिस्सा है, बल्कि भारत के साथ उसकी बढ़ती सामरिक प्रतिस्पर्धा का एक महत्वपूर्ण मोर्चा भी है।

## बीआरआई का चक्रव्यूह

बालेन्द्र शाह के राज्याभिषेक के पश्चात बीजिंग ने यद्यपि औपचारिक शिष्टाचार का पालन करते हुए उन्हें बधाई प्रेषित की, किंतु नेपथ्य में द्विपक्षीय संबंधों की ऊष्मा उस स्तर पर नहीं है, जो केपी शर्मा ओली के कालखंड में दृष्टिगोचर होती थी। 2024 में हस्ताक्षरित 'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव' अर्थात बीआरआई की महत्वाकांक्षी योजना अब एक संशय के कुहासे में घिरी प्रतीत होती है। 2017 से ही यह योजना चीन के बढ़ते प्रभाव का प्रतीक रही है, किंतु धरातल पर इसकी गति अत्यंत मंद रही है। प्रारंभ में चयनित 35 परियोजनाओं में से केवल 9 ही अंतिम सूची में स्थान पा सकीं, और वे भी अब विधिक एवं आर्थिक विसंगतियों की भेंट चढ़ रही हैं।

नेपाल का नवीन नेतृत्व अब चीन के सम्मुख उस 'ऋण जाल' में फँसने को तैयार नहीं है, जिसने श्रीलंका और पाकिस्तान जैसे राष्ट्रों की अर्थव्यवस्थाओं को पंगु बना दिया है। काठमांडू की स्पष्ट शर्त है—अनुदान, न कि ऋण। चीन, जो अपनी निवेश नीतियों में अत्यंत कठोर रहा है, अब स्वयं को एक विचित्र असमंजस में पाता है। हाल के समझौतों में सम्मिलित 10 परियोजनाओं पर प्रत्येक के लिए पृथक वित्तपोषण आधार तय करने की सहमति को नेपाली अधिकारियों ने अपनी कूटनीतिक विजय के रूप में अंकित किया है। टोरखा-छारे सुरंग और हिल्सा-सिमिकोट सड़क जैसी परियोजनाओं में यद्यपि कुछ प्रगति हुई है, किंतु केरुंग-काठमांडू रेलवे जैसे स्वप्निल प्रोजेक्ट्स अभी भी व्यवहार्यता रिपोर्टों के दलदल में फंसे हैं। शाह का दृष्टिकोण स्पष्ट हैः प्रत्येक परियोजना का मूल्यांकन उसके आर्थिक लाभांश और सामरिक स्वायत्तता के मापदंडों पर किया जाएगा, न कि वैचारिक सहानुभूति के आधार पर।

## झापा का औद्योगिक पार्क

प्रधानमंत्री बालेन्द्र शाह की रणनीतिक सावधानी का सर्वाधिक प्रखर उदाहरण झापा के दमक में विकसित होने वाले चीन-नेपाल औद्योगिक पार्क के प्रति उनका मौन है। 2019 में हस्ताक्षरित और 2021 में ओली द्वारा आधारशिला रखे जाने के पश्चात भी, शाह ने इसे अपने चुनावी वादों और प्राथमिकताओं से पृथक रखा। भारत-नेपाल की दक्षिणी सीमा के अत्यंत समीप इस पार्क की स्थिति नई दिल्ली के लिए सदैव एक सामरिक चिंता का विषय रही है। शाह का यह रुख संकेत देता है कि वे नेपाल की धरती को दो महाशक्तियों के मध्य 'सुरक्षा-संघर्ष' का अखाड़ा नहीं बनने देना चाहते। भारत की वैध सुरक्षा चिंताओं का संज्ञान लेना शाह की उस संतुलित नीति का हिस्सा है, जो नेपाल के दीर्घकालिक हितों को सुरक्षित रखती है।

# पोखरा हवाई अड्डा: भ्रष्टाचार का काला साया

चीनी ऋण और तकनीकी सहायता से निर्मित पोखरा अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा आज बीजिंग की कूटनीतिक साख के लिए एक बड़ा प्रश्नचिह्न बन चुका है। भ्रष्टाचार निवारण आयोग अर्थात सीआईएए द्वारा चीनी सरकारी कंपनी सीएएमसी इंजीनियरिंग लिमिटेड और उसके अधिकारियों के विरुद्ध दर्ज किए गए धन के दुरुपयोग के मामलों ने चीनी निवेशों पर से जन-विश्वास को खंडित कर दिया है। ठेकेदार द्वारा 'दुर्भावनापूर्ण इरादे' से परियोजना प्राप्त करने के आरोपों ने यह सिद्ध कर दिया है कि चीनी सहायता अक्सर पारदर्शिता की वेदी पर दी जाती है।

दिसंबर 2025 में चीनी राजदूत द्वारा ठेकेदार का बचाव करना और इसे 'बाहरी साजिश' करार देना नेपाली जनमानस को स्वीकार्य नहीं हुआ। भ्रष्टाचार उन्मूलन के संकल्प पर सत्ता में आए बालेन्द्र शाह पर अब इन परियोजनाओं की सूक्ष्म जांच करने का भारी दबाव है। यदि पोखरा हवाई अड्डे की जांच अपनी तार्किक परिणति तक पहुँचती है, तो भविष्य में चीनी कंपनियों के लिए नेपाल में निर्बाध प्रवेश अत्यंत दुरूह हो जाएगा।

## सामरिक जकड़न और स्वायत्तता की खोज

पिछले कुछ वर्षों में चीन ने 'वन चाइना पॉलिसी' को 'वन चाइना प्रिंसिपल' में परिवर्तित करने और नेपाल को अपनी वैश्विक सुरक्षा पहल अर्थात जीएसआई और वैश्विक सभ्यता पहल अर्थात जीसीआई में सम्मिलित करने का भगीरथ प्रयास किया है। किंतु, नेपाल का नवीन नेतृत्व केवल वैश्विक विकास पहल अर्थात जीडीआई तक ही स्वयं को सीमित रखने का पक्षधर है। तिब्बत से जुड़ी सुरक्षा चिंताओं पर बीजिंग का बढ़ता दबाव अब काठमांडू की 'संप्रभुता की दीवार' से टकरा रहा है।

बालेन्द्र शाह का अतीत चीन के प्रति एक प्रखर राष्ट्रवादी और आलोचनात्मक दृष्टिकोण का रहा है। 2023 में उनकी चीन यात्रा का निरस्तीकरण, जो बीजिंग द्वारा जारी मानचित्र में नेपाल के कुछ क्षेत्रों को भारत का हिस्सा दिखाए जाने के विरोध में था, उनकी 'नैतिक कूटनीति' का परिचय देता है। चीन के लिए अब नेपाल में उन कम्युनिस्ट खिलाड़ियों का अभाव खल रहा है, जो वैचारिक समानता के नाम पर बीजिंग के एजेंडे को सुगम बनाते थे। राष्ट्रीय स्वतंत्र पार्टी का 'गैर-कम्युनिस्ट' और 'परिणाम-केंद्रित' चरित्र चीन की उस पारंपरकि 'पार्टी-टू-पार्टी' कूटनीति के लिए एक बड़ी बाधा है।

## हिमालयी संतुलन का नया अध्याय

नेपाल आज एक ऐसी राजनैतिक संधि-बेला पर खड़ा है, जहाँ उसे अपनी भौगोलिक विवशता को एक सामरिक शक्ति में रूपांतरित करना है। चीन के साथ आर्थिक जुड़ाव नेपाल की अर्थव्यवस्था के लिए अनिवार्य है, किंतु वह जुड़ाव भारत पर निर्भरता कम करने के नाम पर आत्मघाती नहीं होना चाहिए। दो विशाल शक्तियों के मध्य स्थित एक भू-आबद्ध राष्ट्र के लिए बालेन्द्र शाह की रणनीति एक 'कठिन संतुलन' का अभ्यास है।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के लिए शाह का नेतृत्व एक ऐसी चुनौती है, जिसका समाधान वह अपनी पुरातन विधाओं में नहीं खोज पा रही है। नेपाल की यह नई सरकार अब कम समझौताकारी और अधिक स्वाभिमानी स्वर में बात कर रही है। हिमालय की ऊंचाइयों से निकलने वाली यह राजनैतिक ध्वनि अब यह स्पष्ट कर रही है कि काठमांडू का भविष्य न तो बीजिंग के विस्तारवाद में सुरक्षित है और न ही किसी बाह्य प्रभाव में। नेपाल का भविष्य अब केवल नेपाल के उन युवाओं के हाथों में है, जो तकनीक, पारदर्शिता और राष्ट्रीय गौरव को अपनी पहचान मानते हैं।

# रात, रिश्ता और रेड कार्पेट !

मुंबई की चमचमाती फिल्मी गलियों में इन दिनों एक नई फुसफुसाहट तेजी से तैर रही है। चर्चा है कि बॉलीवुड की चर्चित अभिनेत्री कियारा आडवाणीऔर एक युवा बिजनेस टाइकून के बीच बढ़ती नजदीकियों ने इंडस्ट्री के गलियारों में हलचल मचा दी है। सूत्रों की मानें तो पिछले कुछ हफ्तों से दोनों को कई हाई-प्रोफाइल प्राइवेट डिनर और देर रात की पार्टीज़ में साथ देखा गया है।

दिलचस्प बात यह है कि हाल ही में दुबई में आयोजित एक लक्ज़री फैशन इवेंट में भी दोनों की “सीक्रेट एंट्री” चर्चा का विषय बन गई। सोशल मीडिया पर वायरल एक धुंधली तस्वीर ने तो गॉशिप बाजार में आग ही लगा दी। हालांकि अभिनेत्री की टीम इसे “सिर्फ प्रोफेशनल फ्रेंडशिप” बता रही है, लेकिन बॉलीवुड के जानकार इसे आने वाले बड़े “पावर कपल” की शुरुआत मान रहे हैं।

उधर, अभिनेत्री के करीबी मित्रों का कहना है कि वह इन दिनों अपनी निजी जिंदगी को लेकर बेहद “सेलेक्टिव” हो चुकी हैं और मीडिया की चकाचौंध से दूर रहना चाहती हैं। लेकिन बॉलीवुड है जनाब यहां कैमरों से ज्यादा तेज नजरें गॉशिप कॉरिडोर की होती हैं। अब देखना यह है कि यह कहानी सिर्फ अफवाह बनकर रह जाती है या फिर जल्द ही किसी रेड कार्पेट पर दोनों हाथों में हाथ डाले नजर आते हैं !

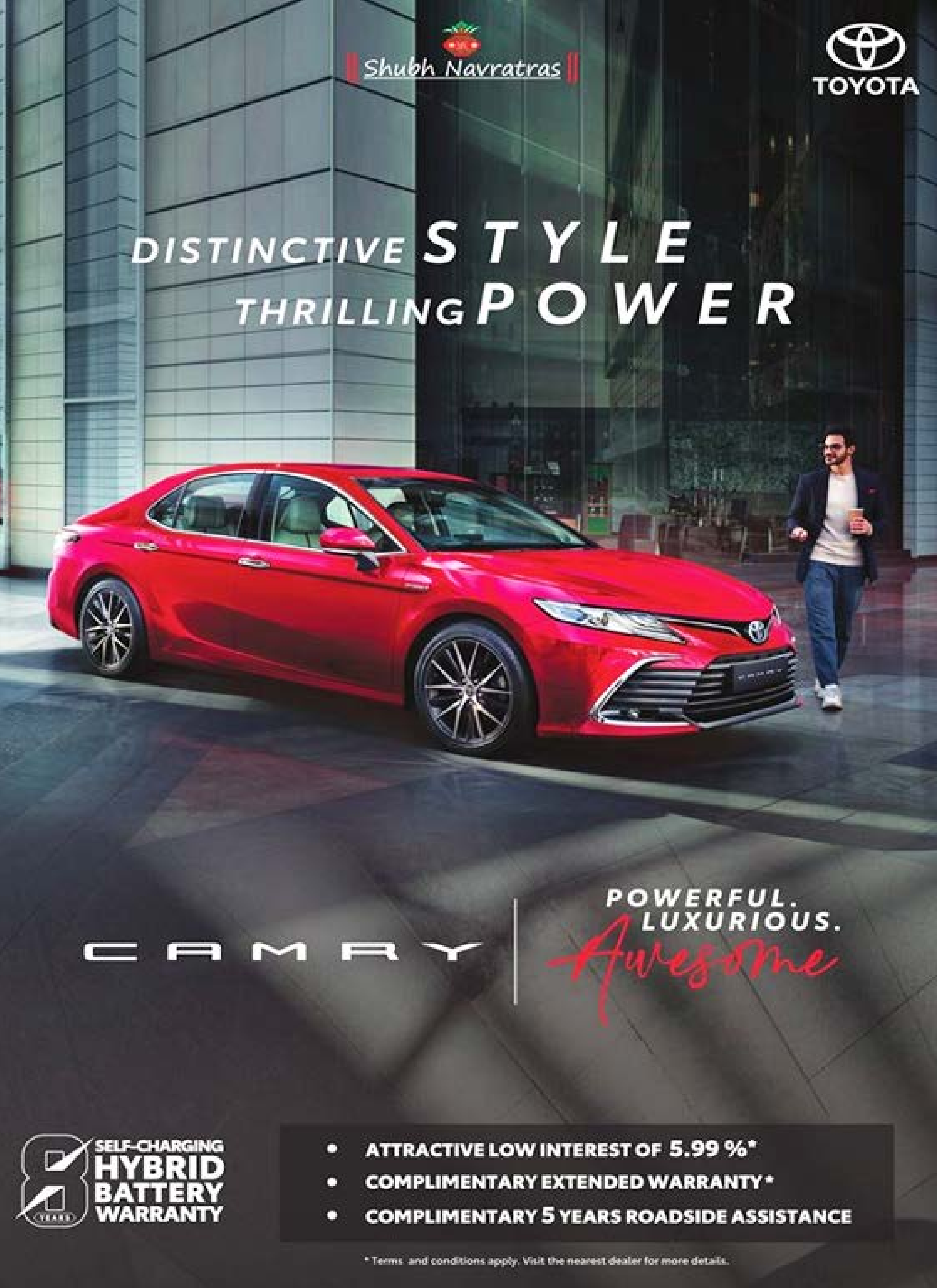
Shubh Navratras
TOYOTA
DISTINCTIVE STYLE
THRILLING POWER
CAMRY
POWERFUL.
LUXURIOUS.
Awesome
SELF-CHARGING HYBRID BATTERY WARRANTY
8 YEARS
• ATTRACTIVE LOW INTEREST OF 5.99 %*
• COMPLIMENTARY EXTENDED WARRANTY*
• COMPLIMENTARY 5 YEARS ROADSIDE ASSISTANCE
* Terms and conditions apply. Visit the nearest dealer for more details.

PRGI NO : DELHIN/2017/74560